।। ओ३म् ।।

पाक्षिक

परोपकारी

• वर्ष ५९ • अंक १० • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र • मई (द्वितीय) २०१७

महर्षि दयानन्द सरस्वती

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित
महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, अजमेर
में न्याय दर्शन का अध्यापन

मध्य में आचार्य सत्यजित् आर्य
एवं न्याय अध्येताओं का सामूहिक चित्र

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुख पत्र

वर्ष : ५९ अंक : १०

दयानन्दाब्द: १९३

विक्रम संवत्: ज्येष्ठ कृष्ण २०७४

कलि संवत्: ५११८

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११८

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.,
त्रिवार्षिक-५८० रु.,
आजीवन-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पा./१५२ डॉ.,
त्रिवार्षिक-१४० पा./२२५ डॉ.,
आजीवन-(=१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

मई द्वितीय २०१७

अनुक्रम

०१. महर्षि दयानन्द का आचार चिन्तन	सम्पादकीय	०४
०२. संध्योपासना क्यों?	डॉ. धर्मवीर	०६
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु	११
०४. बालकों की शिक्षा	आ. उदयवीर शास्त्री	१६
०५. लोकोत्तर धर्मवीर-२	तपेन्द्र वेदालंकार	१९
०६. स्वामी श्रद्धानन्द जी! जितना गर्व...	धर्मेन्द्र जिज्ञासु	२३
०७. शंङ्का - समाधान - २	डॉ. वेदपाल	२८
०८. स्वामी दयानन्द का यज्ञ विषयक....	डॉ. उदयन आर्य	३०
०९. नया झूँठ ही सच से डरता! पुराना...	आर्य प्रहलाद गिरि	३२
१०. सुख-दु:ख का मूल-उत्पादक....	प्रकाश चौधरी	३४
११. महर्षि के अनन्य भक्त एवं......	डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी	३६
१२. संस्था-समाचार		४०
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

महर्षि दयानन्द का आचार-चिन्तन

भारतीय संस्कृति के व्यावहारिक पक्ष में आचार-शास्त्र की मुख्य भूमिका है। वैदिक संस्कृति में आचार-चिन्तन उसके केन्द्र में विद्यमान है। वस्तुत: ज्ञान का व्यावहारिक पक्ष ही आचार-चिन्तन है। पाश्चात्य दर्शन में आचार को नैतिक-शास्त्र से जोड़ा गया है और उससे पृथक् ज्ञान की एक शाखा 'नीति-शास्त्र' का विकास हुआ, जिसमें जीवन के उद्देश्यों को चिह्नित करते हुए नीतिशास्त्र को विकसित किया गया। उनके नीति-दर्शन में सुखवाद, कठोरतावाद, पूर्णतावाद, मूल्यवाद इत्यादि वादों के संदर्भों में नीति-शास्त्र को व्याख्यायित किया गया है।

पाश्चात्य दार्शनिक मैकेंजी ने आचार-चिन्तन के विषय में लिखा है कि यह शास्त्र उचित अथवा शुभ का अध्ययन करता है। उन्होंने आचार-शास्त्र को '**मानव जीवन के आदर्श का विज्ञान**' का अध्ययन माना है। इसी प्रकार **विलियम लिली, अर्वन, जी.ई.मूर, बेंथम, मिल** इत्यादि पाश्चात्य चिन्तक आचार-चिन्तन को दर्शन की एक शाखा के रूप में स्वीकार करते हैं और उसे अध्ययन का एक विषय मात्र मानते हैं। ये विद्वान् आचार-शास्त्र को व्यावहारिक विज्ञान स्वीकार नहीं करते; हाँ, संत थॉमस और विलियम लिली उसे व्यावहारिक विज्ञान स्वीकार करते हैं।

महर्षि दयानन्द ने उपयोगितावाद, सुखवाद, पूर्णतावाद, विकासवाद, इत्यादि वादों से परे जाकर आचार को ही धर्म स्वीकार किया। उनके लिए आचार-शास्त्र आचरण का विषय है, मनु के शब्दों में 'आचार: परमो धर्म:'। उन्होंने इसीलिए सत्य के आचरण को ही जीवन का उद्देश्य माना और इसी से दु:खों की अत्यान्तिक निवृत्ति मानी है। आचरण से ही 'आचार्य' का भी सम्बन्ध है, जिसे परिभाषित करते हुए महर्षि दयानन्द ने कहा है कि जो सांगोपांग वेद-विद्याओं का अध्यापन, सत्याचार का ग्रहण, और मिथ्याचार का त्याग करावे वही आचार्य है। उन्होंने अपने ग्रन्थ **व्यवहारभानु** में आचार-चिन्तन के व्यावहारिक पक्षों का विस्तार से विवेचन किया है। ऋषि दयानन्द के दर्शन में परम तत्व, अनन्त, निर्विकार, अजर, अमर, अभय और नित्य है, जिसके साक्षात्कार का उद्देश्य ही मनुष्य का परम शुभ है और जिसका साधन सत्याचरण ही है।

पाश्चात्य नीति-शास्त्र के प्रसिद्ध आचार्य इमेनुअल कांट ने नीतिदर्शन को एक **निरपेक्ष आदेश** के रूप में स्वीकार किया। उनके लिए '**कर्त्तव्य**, कर्त्तव्य के लिए' एक आदेश है और नैतिक नियम उसी कर्त्तव्य के लिए हैं। उन्होंने परम सत्ता को इसीलिए स्वीकार किया कि वह नैतिक नियमों की मांग है जिसके अनुसार ही हमें स्वयं के जीवन को जीना है। इसलिए उनकी नैतिक मान्यताओं की शर्तों में ईश्वर का अस्तित्व, आत्मा की अमरता और संकल्प की स्वतंत्रता जैसी शर्तें हैं। महर्षि दयानन्द की तत्व-मीमांसा में आचार-चिन्तन आधारभूत सिद्धान्त है, क्योंकि तत्व-चिन्तन का सोपान ही आचार-चिन्तन है। इसी आचार-चिन्तन में उचित और अनुचित, शुभ और अशुभ, सत्य और असत्य, कर्त्तव्य और दायित्व, सद्गुण और कर्त्तव्य, अधिकार और कर्त्तव्य, पाप और पुण्य इत्यादि मौलिक नैतिक प्रत्ययों को महर्षि दयानन्द ने धर्म के रूप में स्वीकार किया है।

वस्तुत: भारतीय जीवन-पद्धति में आचार के ह्रास का ही परिणाम था कि भारत को पराधीनता की स्थितियों से गुजरना पड़ा। राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्य, मानव के प्रति कर्त्तव्य, समाज के प्रति कर्त्तव्य; इन सभी को पृथक्-पृथक् समूहों या कक्षों में नहीं बाँटा जा सकता। नैतिकता का प्रारम्भिक बिन्दु ही हमारी मूल्य-मीमांसा है जिसे स्वामी दयानन्द ने मनुस्मृति के धर्म के 10 लक्षणों को स्वीकार करते हुए 11वाँ लक्षण अहिंसा को जोड़ा है, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इत्यादि शाश्वत मूल्यों के साथ उन्होंने धर्म को ही अभिहित किया है। महर्षि कणाद ने ठीक ही कहा है कि अभ्युदय और नि:श्रेयस् ही धर्म हैं। इन दोनों में सम्यक् सन्तुलन या अभ्युदय से ही नि:श्रेयस् की प्राप्ति आचार-चिन्तन का प्रथम बिन्दु है।

महर्षि दयानन्द ने मीमांसा दर्शन के धर्म को प्रेरणा के रूप में स्वीकार किया है। आज सामाजिक और व्यक्तिगत दोनों ही क्षेत्रों में मनुष्य इस प्रेरणा से वंचित हुआ है।

स्वार्थों की पूर्ति, अहंकार, केवल स्वयं पर ही विचार करना, धन-लोलुपता, पद-प्राप्त करने हेतु ईर्ष्या इत्यादि विचार भारतीय जनमानस में स्वतंत्रता के बाद और भी गहरा गये हैं और इस स्थिति से आर्य समाज का विराट संगठन भी अछूता नहीं रहा। विगत वर्षों में देखा जाये तो जहाँ आर्य समाज ने आचार-चिन्तन का सर्वश्रेष्ठ दृष्टान्त उपस्थित किया एवं यह व्यष्टि और समष्टि दोनों परिप्रेक्ष्य में फलीभूत हुआ है तो दूसरी ओर क्षुद्र स्वार्थ और केवल अहंकारवश समाज के बहुत से प्रकल्प इस सोच से बाधित भी हुए हैं। देखा गया है कि न्यायालयों में आर्यसमाजी की गवाही को न्यायाधीश सर्वाधिक प्रमाण के रूप में स्वीकार करता था। राष्ट्रभक्ति, त्याग की भावना, राष्ट्र-भाषा में अनुरक्ति, सामाजिक विन्यास का सुदृढ़ीकरण, धन की शुद्धता, इन सभी क्षेत्रों में देखा जाये तो महर्षि दयानन्द का आचार-चिन्तन ही इनके मूल में समाहित था। इसी का नैतिक बल था कि विपरीत परिस्थितियों में भी महर्षि दयानन्द के अनुयायी विचलित नहीं हुए।

किसी भी राष्ट्र या समाज का उत्थान बिना आचरण की शुद्धता के नहीं हो सकता। ऋषि दयानन्द ने आत्म-सिद्धि को परम शुभ माना है जिसकी प्राप्ति का मार्ग ही सत्य का आचरण है। योग दर्शन के यम और नियम का पालन ऋषि दयानन्द को स्वीकार्य है। अन्य भारतीय चिन्तकों में महात्मा बुद्ध, महावीर, आचार्य शंकर, चार्वाक इत्यादि के आचार-चिन्तन की अपनी-अपनी मान्यतायें हैं, जिनमें तार्किकता है, तो व्यावहारिकता नहीं है और व्यावहारिकता है तो तत्त्वचिंतन, आचार-चिंतन की शर्त पूर्ण नहीं है। समकालीन दार्शनिकों में डॉ. राधाकृष्णन, श्री अरविन्द, महात्मा गांधी इत्यादि के आचार-चिंतन की मीमांसा की जाये तो यह कहना समीचीन होगा कि इन सभी ने भारतीय संस्कृति की मान्यताओं को तो स्वीकार किया लेकिन चूंकि उनकी दार्शनिक मान्यतायें भिन्न-भिन्न थीं, इसलिए वे आचार-चिन्तन की मांग पूर्ण नहीं कर पातीं तभी वे उनकी व्याख्या अपनी-अपनी दार्शनिक मान्यताओं के आधार पर करने को बाध्य हैं। फलतः वे जीवन के व्यावहारिक और पारमार्थिक दोनों क्षेत्रों में समन्वय ही करने में रह जाते हैं।

स्पष्टतः महर्षि दयानन्द ने वेदों, उपनिषदों आदि में आचार-चिन्तन को पृथक् ज्ञान की शाखा नहीं माना जैसा पश्चिमी दार्शनिक मानते हैं अपितु वे तो वेदानुकूल जीवन जीने को ही आचार-चिन्तन मानते हैं। सत्यार्थ प्रकाश, व्यवहारभानु, संस्कारविधि ही नहीं अपितु उनका सम्पूर्ण लेखन, उनके पत्र-व्यवहार इत्यादि सभी स्थानों पर सत्याचरण को ही आधार मान कर आचार-चिन्तन की विवेचना की गई है। यही दृष्टि उन्हें आधुनिक काल के चिन्तकों से पृथक् रख देती है। इसमें कठोरता का स्थान नहीं है, लेकिन भक्ष्याभक्ष्य, छुआछूत इत्यादि के आधार पर पापी घोषित करना, धर्म-विरोधी घोषित करना आदि, उन्हें स्वीकार्य नहीं है। सत्य का महत्व उन्होंने व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय जीवन में सांगोपांग माना है। उनके लिए यह केवल बौद्धिक वाग्विलास का विषय नहीं है अपितु आचरण की कसौटी है इसीलिए वे जीवनपर्यन्त इसी आचार-चिन्तन को स्वीकार करते रहे। उनकी मान्यताओं को इस श्लोक में कहना प्रासंगिक होगा-

अनभ्यासेन वेदानाम् आचारस्य च वर्जनात्।
आलस्याद् अन्नदोषाच्च मृत्युर्विप्रान् जिघांसति।।

– (मनु. 5/4)

अर्थात् वैदिक मतानुसार सत्यशास्त्रों के स्वाध्याय के अभाव में आचरणविहीन होने से ही मानव का पतन होता है फलतः वह कर्मविहीन होकर अशुद्ध अन्न का सेवन करने लगता है। यही कारण है उसके असमय काल का, यह आश्चर्य नहीं है।

ऋषि दयानन्द ने स्वयं के जीवन में उच्चकोटि का आदर्श, व्यवहार में लाकर ही आचार का विवेचन किया है। उन्होंने कहा है-**'मैंने परीक्षा करके निश्चय किया है।'** यही अनुभूति से परखा-जांचा आचरण है। इसीलिये आर्य समाज ने जन्मना जाति-व्यवस्था, छुआछूत का विरोध करते हुए मानव-निर्माण के उद्देश्य को स्वीकार किया एवं शास्त्रानुमोदित आचार-व्यवस्था दी है। महर्षि के सत्यार्थ प्रकाश में सर्वत्र मानव-निर्माण का कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया है।

अतः यह कहना समीचीन होगा कि महर्षि दयानन्द का आचार-चिन्तन सार्वभौम आचार-चिन्तन का ही स्वरूप है। जीवन के पुरुषार्थों का व्यवहार ही यथार्थ में महर्षि दयानन्द का आचार-चिन्तन है।

आपका
दिनेश

संध्योपासना क्यों?-२

प्रवचनकर्त्ता - डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

यह लेख आचार्य धर्मवीर जी द्वारा बिलासपुर (छत्तीसगढ़) में दिये गये प्रवचन का संकलन है। ये प्रवचन एक निश्चित विषय पर दिये गये हैं, इसलिये अति उपयोगी हैं। इन प्रवचनों को आचार्य प्रवर की ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य द्वारा लेखबद्ध किया गया है। - **सम्पादक**

पिछले अंक का शेष भाग.......

वह सामर्थ्य कहाँ से पूरा होगा, वह हमारे परिचितों से पूरा नहीं होगा, हमारे साधनों से भी पूरा नहीं होगा, तब जिसकी हम याद करते हैं, उसको नाम हम कुछ भी दे सकते हैं, देते हैं, वो हमारे अपने-अपने ज्ञान के अनुसार होता है अपनी परम्परा के अनुसार होता है। इसको मैं इन शब्दों में कहता हूँ कि भगवान् कब याद आता है? लोग कहते हैं सुख में याद करना चाहिए, तो मैं कहता हूँ कि भगवान् सुख में याद करने का होता तो वह हमें याद भी सुख में ही आता। जब हम प्रसन्न होते हैं, तो हमें याद आना चाहिए। लेकिन हम प्रसन्न हैं तो उसका स्मरण नहीं आता, उसकी याद नहीं आती। वह याद आता है दु:ख में, इसका मतलब वह दु:ख में याद करने के लायक है। दु:ख में ही उसकी याद आती है, दु:ख में ही उसका स्मरण होता है, क्यों? जो जिसका उपाय होता है, वो उपाय उस समस्या पर ही याद आता है। अब इसको इस तरह से समझ सकते हैं कि हमारा जो दर्द है, उसके लिए दवा चाहिए, जो भूख है उसके लिए भोजन चाहिए, जो प्यास है उसके लिए पानी चाहिए। लेकिन हर समय तो हम पानी-पानी नहीं करते। हर समय हम रोटी-रोटी भी नहीं करते। लेकिन यदि भूख लगी हो तो सिवाय रोटी के क्या सूझता है? कुछ ध्यान आएगा ही नहीं। इसी तरह से जो दु:ख संसार में प्राप्त हैं, उन दु:खों को देखने पर यदि किसी चीज से हमारा छुटकारा हो सकता है, तो वो उसका उपाय है। वो उपाय मनुष्य नहीं है, वस्तुएं नहीं हैं, दवा नहीं है, पैसा नहीं है। इन सब परिस्थितियों से परे जाकर जो उपाय होता है उसे हम ईश्वर कहते हैं। संध्या क्यों करनी चाहिए? संध्या करने के कुछ लाभ होते हैं, आपको ईश्वर मिलता है कि नहीं मिलता है? कोई बात नहीं, आपको किसी और चीज की उपलब्धि होती है या नहीं होती है, लेकिन सबसे अच्छी बात जो होती है, वो मनु महाराज एक जगह लिखते हैं-

ऋषयो दीर्घसन्ध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः प्रज्ञा यशश्च कीर्तिं च ब्रह्मवर्चसमेव च।

मौलिक चीज है कि जो व्यक्ति जितनी देर तक संध्या में बैठ सकता है, बैठता है तो एक तो यह होता है कि हमें चार पंक्तियाँ पढ़नी हैं, हनुमान चालीसा पढ़ना है, सप्तशती पढ़नी है, चंडीशतक पढ़ना है, पढ़ा समाप्त हो गया। तो यह पढ़ना तो क्या बाँचना हो गया। बाँच लिया, उससे भी नुकसान नहीं हुआ, कुछ तो लाभ होगा। उस जगह पर बैठ गए आप, आपने कुछ किया, उसका तो होगा। लेकिन जो वास्तविक लाभ है, वो क्या है। वास्तविक लाभ कहता है, **दीर्घ संध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः**

संध्या करने से आयु बढ़ती है, यह कैसे होगा। व्यायाम करने से आयु बढ़ती है, यह तो समझ में आएगा। भोजन करने से आयु बढ़ती है यह समझ में आएगा। भोजन कराने से आयु बढ़ती है, यह समझ में आएगा। लेकिन यह आज तक किसी ने नहीं बताया कि संध्या करने से आयु बढ़ती है। लेकिन ऋषि कहते हैं, संध्या करने से आयु बढ़ती है और व्यक्ति जितनी लम्बी संध्या करता है, व्यक्ति की आयु उतनी ही बड़ी होती है। इससे एक सिद्धान्त निकलता है कि ऐसा हो सकता है। अब यह सोचना पड़ेगा कि कौन-सा कारण उस संध्या में निवारण करता है। इसमें एक रोचक तथ्य है, जिस पर ऋषि दयानन्द ने एक प्रश्न के उत्तर में कहा है-हमारा सिद्धान्त कहता है कि मनुष्य ने जो कार्य किए हैं, उनका फल उसे मिलेगा। एक सिद्धान्त बड़ा विचित्र है और सब सिद्धान्तों से, सब धर्मों से, सब मान्यताओं से विचित्र मान्यता है, भिन्न मान्यता है। और जगह आप किसी की उपासना करो तो वह प्रसन्न

होकर आप को कुछ देता है। मनुष्य भी देता है। आप माता-पिता की सेवा करते हो, माता-पिता प्रसन्न होकर आपको आशीर्वाद देते हैं, संपत्ति देते हैं, कुछ और सहयोग देते हैं। किसी सेठ-साहूकार की सेवा करते हैं, वो भी आपको ईनाम दे देता है। आप किसी अधिकारी की सेवा करो तो दण्ड की माफी हो सकती है। हम सारे संसार में यह देखते हैं कि हम यदि किसी की कुछ सेवा करते हैं, किसी के पास रहते हैं, तो हमें उसका लाभ होता है-लाभ दो तरह से होते हैं, या तो हमें पुरस्कार मिलता है या हमारे कोई दण्ड हैं, कोई अपराध हैं तो वो क्षमा हो जाते हैं। क्या इसके लिए संध्या कर ली जाए? क्योंकि परमेश्वर भी यदि कोई अपराध कोई दण्ड, हमें देने वाला है और यदि हम उसकी सेवा करेंगे, उसके पास रहेंगे, तो वह हमें अपराध से मुक्त कर देगा। दण्ड से क्षमा कर देगा। यह तो एक स्थिति हो सकती है कि भाई इसलिए संध्या करनी चाहिए।

वैदिक धर्म की संध्या में यह विचार बनता नहीं है। क्योंकि वहाँ तो जो कर्म जिसने किए हैं, जितने किए हैं, जैसे किए हैं, परमेश्वर उसको उतना, वैसा फल अवश्य देगा। उसमें कोई कमी नहीं कर सकता। वो चाहे कितना भी प्रसन्न हो जाए, और कितना भी नाराज हो जाए तो अतिरिक्त नहीं बढ़ा सकता। बड़ा स्थायी सिद्धान्त है कि उसके जिम्मेदार हम हैं। यदि वो अतिरिक्त दे सकता, या कुछ छीन सकता तो जिम्मेदार वो हो जाता। इसका मतलब है कि उसकी मर्जी आए तो दे और उसकी मर्जी आए तो ले। इसको आप ऐसे समझ सकते हैं कि बाकि जितने धर्म हैं वहाँ अपराध करते हैं, तो भी यह समझते हैं कि दण्ड हमें नहीं मिलेगा, भगवान् माफ कर देगा यदि हमको दण्ड मिला है तो वो यह नहीं समझते कि हमारे कर्मों का फल है। बल्कि यह समझते हैं कि भगवान् की मर्जी से मिल गया है। किसी के पास आँख नहीं है, तो समझते हैं कि भगवान् ने आँख नहीं दी, उसकी मर्जी नहीं थी देने की। लेकिन मर्जी क्यों? मर्जी तो बिना कारण के नहीं हो सकती। आखिर कोई भी व्यक्ति नाराज होता है तो नाराज क्यों, इसका जवाब उनके पास नहीं है। कोई प्रसन्न होता है तो प्रसन्न क्यों? इसका उत्तर उनके पास नहीं है। तो सिद्धान्त निकलता है कि जो कुछ है, वो हमारा है। व्यक्ति का है, मनुष्य का है, जीव का है। उसने जो कार्य किया है, उसका फल उसे मिलेगा। इस सिद्धान्त से भगवान् अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकता। मतलब वो अतिरिक्त दे नहीं सकता, तो हमसे ले भी नहीं सकता। अर्थात् हमारा जो अच्छा या बुरा है, वो उसमें कोई कमी नहीं कर सकता।

बुरा नहीं कर सकता, तो अच्छा भी नहीं कर सकता। क्योंकि यदि आप ये कहोगे कि अच्छा कर सकता है या बुरा कर सकता है, तो गड़बड़ हो जाएगी। एक करेगा तो दूसरा भी करेगा। एक नहीं कर सकता, इसलिए दूसरा भी नहीं कर सकता। नियम यह है कि वो केवल हमारे किए हुए कर्मों के फलों को दे सकता है। उसको कम नहीं कर सकता, उसको अधिक नहीं कर सकता। दूसरा, कभी-कभी लोग यह पूछते हैं-साहब जिन्दगी में ऐसा तो नहीं होता कि सारे ही कर्म अच्छे हों या सारे ही कर्म बुरे हों। कुछ कर्म अच्छे हो जाते हैं और कुछ कर्म बुरे हो जाते हैं, तो भगवान् कुछ उनमें ऐसा नहीं कर सकता कि १० हमारे बुरे हैं, २० हमारे अच्छे हैं तो दस को कम कर दे उसमें से और १० पर ही फैसला कर ले। ऐसा भी नहीं होता। उसके लिए एक रोचक उदाहरण मुझे याद आ रहा है-महाभारत में जब पांडवों की मृत्यु होती है, तो वे तिब्बत की ओर जाते हैं। पंक्ति में जा रहे हैं, क्रमशः चल रहे हैं, एक के पीछे एक। धीरे-धीरे करके एक-एक व्यक्ति गिरता जाता है, द्रौपदी गिर जाती है, नकुल गिरता है, सहदेव गिरता है, भीम गिरता है, अर्जुन गिरता है। उसके बहुत सारे कारण वहाँ समझाए हैं कि यह क्यों गिरा। सबसे अन्त में दो प्राणी रह जाते हैं-एक युधिष्ठिर और दूसरा उनका कुत्ता। वहाँ एक रोचक सिद्धान्त उन्होंने समझाया है कि जैसे ही युधिष्ठिर दरवाजे पर पहुँचते हैं और स्वर्ग का द्वार खुलता है, कुत्ता भागकर अन्दर जाने का यत्न करता है तो द्वारपाल उसे रोक देता है। युधिष्ठिर कहते हैं कि यह क्यों नहीं जा सकता? द्वारपाल बोले, इसके लिए स्थान नहीं है, यह तो मनुष्यों के लिए है। युधिष्ठिर कहते हैं- फिर मुझे भी नहीं जाना। ऐसी जगह मैं जाकर क्या करूँगा जहाँ मेरा साथी न जाए। वहाँ महाभारत की पंक्ति है-**भागे श्रिया संगमनं ययास्तु यस्य कृते भक्त जनं त्यजेयम्।** ऐसी सम्पत्ति, ऐसी लक्ष्मी मुझे नहीं चाहिए जिसके लिए मुझे

भक्त का त्याग करना पड़े। इसलिए स्वर्ग तुम रखो। द्वारपाल बेचारा कहता है, अच्छा महाराज! ऐसी मजबूरी है तो आपको तो मैं छोड़ नहीं सकता तो आपके साथ ये भी आए तो आ जाए। वहाँ पर जाकर युधिष्ठिर क्या देखते हैं कि दुर्योधन स्वर्ग में बैठा हुआ है। उनको बड़ा दुःख हुआ कि जीवन भर जिस पुण्य के लिए, धर्म के लिए, जिस सत्य के लिए लड़ाई लड़ी, उसका फल हमको नहीं मिला और उसे मिल गया जो जीवन भर अधर्म के लिए लड़ता रहा। उन्हें बड़ा बुरा लगा, उन्होंने व्यवस्थापक से पूछा, भाई मैं तो जिनसे मिलना चाहता हूँ, वो मेरे भाई कहाँ हैं? वो बोले जी वो तो नरक में पड़े हैं। युधिष्ठिर बोले, मुझे नरक में ले चलो, वो युधिष्ठिर को नरक में ले जाते हैं। युधिष्ठिर के आने से उनके भाइयों को एक आनन्द का अनुभव होता है। अर्जुन कहता है-भैया, इधर आओ, भीम कहता है-भैया, इधर आओ। युधिष्ठिर देखता है कि ये तो घोर कष्ट में हैं। तब वो एक प्रश्न करते हैं व्यवस्थापक से- हमने पुण्य किया, हम नरक में और उसने पाप किया, वो स्वर्ग में-ऐसा क्यों? वहाँ उत्तर दिया है कि जिसका जो थोड़ा है, वो पहले मिलता है। पुण्य थोड़ा है, तो पुण्य का फल पहले मिलेगा और पाप थोड़ा है, तो पाप का फल पहले मिलेगा। दुर्योधन के पास थोड़ा पुण्य था, तो पहले उसका आनन्द उठा ले, फिर जो करना है करेगा। वैसे ही जो थोड़ा पाप तुम लोगों ने किया है, उसका दण्ड पहले मिलेगा और पुण्य का फल अलग मिलेगा। इनमें घालमेल नहीं हो सकता। अदला-बदली नहीं हो सकती। बिल्कुल सीधा-सपाट गणित है।

दो सिद्धान्त समझने हैं-एक तो मेरे किए में दूसरे का हस्तक्षेप नहीं होगा, आदमी का तो क्या भगवान् का भी नहीं होता। वो कम-ज्यादा नहीं हो सकता और दूसरा ये है कि जो पाप और पुण्य हैं, उन दोनों का फल अलग-अलग मिलेगा। ऐसा नहीं होगा कि कुछ पुण्यों में से कुछ पाप घट जाएँ या कुछ पाप में से कुछ पुण्य घट जाएँ। जब दो सिद्धान्त इतने स्पष्ट हैं तो फिर शायद संध्या करने की कोई जरुरत बचती नहीं? भाई, उसे देना है, हमें करना है, तो बीच में कौन आ गया। अच्छा करेंगे तो अच्छा ही देगा और बुरा करेंगे तो बुरा ही देगा।

यहाँ ऋषि दयानन्द एक प्रश्न उठाते हैं, वो यह कहते हैं कि आप संसार में किसी के साथ भी जो व्यवहार करते हो, उनमें हर एक से एक चीज पाना चाहते हो कि लोग आपकी प्रशंसा करें। किसी से कोई वस्तु तो आप नहीं चाहते हो, लेकिन यह सुनकर अच्छा लगता है कि आपका बेटा बहुत अच्छा है, बड़ा सभ्य है, बड़ा शालीन है। हमने एक पेंसिल किसी से ली। उससे हम कहते हैं कि भाई साहब, बहुत धन्यवाद, आपने बड़ी कृपा की। छोटे से छोटे, सामान्य से सामान्य व्यक्ति से हम यह चाहते हैं कि वो हमें अच्छा समझे। यह तो थोड़ा सा देने वालों के लिए है, परमेश्वर उनमें से है जिसने हमें बिना माँगे बहुत दे रखा है। आप कल्पना करके देखो कि क्या-क्या दे रखा है-इस संसार में हम आए तो सबसे पहले माता-पिता दिये, हम माता-पिता का कोई योगदान मानें या न मानें, लेकिन सबसे बड़ा योगदान यह है कि हम माता-पिता के बिना संसार में आ ही नहीं सकते। हमारे माता-पिता की व्यवस्था किसने की? परमेश्वर ने की। उसके बाद संसार में आ गए तो आने के बाद जो कुछ हमको मिला, इसमें हमने क्या माँग कर लिया हुआ है-हवा, पानी, अन्न, फल-फूल, इतना बड़ा जन-समुदाय, इतना बड़ा पशुवर्ग, इतना बड़ा वातावरण, इतनी बड़ी भूमि, इतना ऊँचा, बड़ा लंबा-चौड़ा आकाश, ये सब तो हमारी आवश्यकता से जुड़ा हुआ है ना? कहीं न कहीं हम इनका उपयोग कर रहे हैं और यह उपयोग हमने माँगकर या खरीदकर नहीं लिया हुआ है। हमको इतना सब कुछ अनायास ही मिला है। कृतघ्नता बुरी है, बुराई की ओर ले जाने वाली चीज है और कृतज्ञता हमें अच्छाई की ओर ले जाने वाली चीज है। यह आत्मा का गुण है। अतः यदि हम कृतघ्नता करते हैं, या कृतघ्न बनते हैं तो हमारा पतन का रास्ता है और यदि हम कृतज्ञ हैं तो उसमें पवित्रता का रास्ता है, हम अच्छाई की ओर बढ़ते हैं। हमारा सहज गुण है-कृतज्ञता।

शेष भाग अगले अंक में.....

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग—साधना शिविर

दिनांक : १८ से २५ जून, २०१७

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग-साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा- खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।

१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ-मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

email:psabhaa@gmail.com

-संयोजक

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

कुछ तड़प-कुछ झड़प

-प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

इतिहास बोल पड़ा:- आर्यसामाजिक साहित्य में स्थायी महत्त्व की यह पुस्तक इस समय प्रकाशनाधीन है। परोपकारिणी सभा द्वारा इसका प्रकाशन हो रहा है। श्री राहुल आर्य अकोला ने श्री रणवीर आर्य हैदराबाद, श्री इन्द्रजित् जी चामधेड़ा आदि कई मेधावी आर्यवीरों को साथ जोड़कर देश-विदेश से महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज के सम्बन्ध में कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ खोजकर हमें दिये। इनमें महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के सम्बन्ध में सर्वथा नई जानकारी पाकर हम गद्‌गद् हो गये। कुछ सामग्री तो पूरक है और बहुत कुछ ऐसी है जिसका अनावरण प्रथम बार हो रहा है। यथा भारत के जिस महापुरुष पर आधुनिक अमरीकी इतिहास में सबसे पहले एक विस्तृत सचित्र लेख छपा वह महर्षि दयानन्द जी थे।

इस उपलब्धि पर आर्य-जाति जितना गौरव करे, वह कम है। श्री रामभज जी दिल्ली ने परोपकारी में इन दस्तावेज़ों को तड़प-झड़प में पढ़कर उदार हृदय से हमें एक बड़ी राशि भेंट करते हुए कहा-अगली किश्त फिर दूँगा। हमने वह राशि परोपकारिणी सभा को भेंट कर दी। टाइपिस्ट की व्यस्तता के कारण पुस्तक के प्रकाशन में विलम्ब होता गया। हमें चिन्तन का पर्याप्त समय मिल गया। पाण्डुलिपि को बार-बार बदलने में श्रम तो करना पड़ा, परन्तु इससे पुस्तक की गरिमा बहुत बढ़ गई। ऋषि मेले पर यह अद्‌भुत पुस्तक धूमधाम से लोकार्पित की जायेगी। इस कार्य को सिरे चढ़ाकर लेखक श्री राहुल और उसके आर्य माता-पिता भी निश्चय ही धन्य-धन्य हो गये। निश्चय ही इस सामग्री के प्रकाश में आने से आर्यसमाज का गौरव बढ़ेगा। इसमें और क्या-क्या है? अभी इस बारे में हम कुछ नहीं लिखेंगे। आर्यजन उत्सुकता से इसकी प्रतीक्षा करें।

अमरीका का परोपकारी परिवार:- यदा-कदा अमरीका से परोपकारी के प्रेमी पाठकों से चलभाष पर वार्त्तालाप होता रहता है। मान्य डॉ. धर्मवीर जी अन्तिम बार जब अमरीका गये तो इस लेखक ने उन्हें आर्य मिशनरी प्राध्यापक रमेश मल्हन से मिलने को कहा था। वह कादियाँ के एक आर्य परिवार से हैं। वह हमारे विद्यार्थी रहे हैं। डॉ. धर्मवीर जी वहाँ पहुँच गये जहाँ श्री रमेश रहते हैं। झट से रमेश जी ने उनको अपने निवास पर आने का निमन्त्रण दिया।

मनुष्यों के पारखी धर्मवीर जी ने उनसे पूछा, दिन-रात आपको धर्मप्रचार की धुन लगी रहती है। आप की लगन की सर्वत्र प्रशंसा सुनी है। यह बतायें कि आपके हृदय में इतनी आग कैसे लगी? प्रोफेसर रमेश जी ने कहा, ''आर्यसमाज से प्रेम तो माता-पिता से मिला, परन्तु आग जिज्ञासु जी ने लगाई। मैं उनका शिष्य हूँ। भाषण की कला भी उन्हीं की देन है।''

धर्मवीर जी ने उनके नाम परोपकारी लगवा दिया। अब वह परोपकारी के नियमित पाठक हैं। उनके हृदय में मिशन की अग्नि तो पहले ही कम नहीं थी। अब वह आग 'परोपकारी' के कारण धधक रही है। आपने एक ग्रन्थ के प्रकाशन का संकल्प किया है। यह ग्रन्थ लिखा जा रहा है। कुछ मास तक पूरा हो जायेगा। श्री प्रो. रमेश के मित्र, प्रेमी भारत में जहाँ-जहाँ भी हैं वे सब उनके इस संकल्प की सूचना पाकर भाव-विभोर होकर श्री डॉ. धर्मवीर जी का स्मरण कर रहे हैं।

इसी प्रकार महाराष्ट्र के एक युवक श्री रणजीत जी अमरीका में रहते हैं। वह भी परोपकारी के पुराने पाठक तथा स्वाध्यायशील सिद्धान्तनिष्ठ आर्य हैं। आपने भी आर्य समाज के गौरव की रक्षा व सुदृढ़ता के लिये चलभाष पर विचार-विमर्श करते हुए आर्यसमाज के इतिहास पर एक ग्रन्थ लिखने की प्रेरणा दी। आयु का शरीर पर प्रभाव तो पड़ता ही है, तथापि लेखक के हृदय में प्यारे पं. लेखराम के मिशन के लिये आज भी वही ऊर्जा तथा उत्साह है जो पचास वर्ष पूर्व था। सो उनका प्रस्ताव स्वीकार कर छः-सात मास पश्चात् उनके प्रस्ताव को मूर्तरूप देने में हम जुट जायेंगे। परमपिता परमात्मा की कृपा से उनकी इच्छा

पूरी करने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

आचार्य विरजानन्द जी ने चौंकाने वाली सूचना दी- परोपकारिणी सभा के न्यासी प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य विरजानन्द जी ने यह पूछा है कि आपने अपने ग्रन्थ में यह क्या लिख दिया है कि स्वामी ओमानन्द जी के पिता मुसलमान बनने जा रहे थे, पं. लेखराम की कृपा से धर्मच्युत न हुए।

हमने उन्हें कहा कि हमारी किस पुस्तक में आपने ऐसा पढ़ा है? आपने कहा रक्तसाक्षी पं. लेखराम के पृष्ठ १४४ पर ऐसा लिखा बताते हैं। हमने कहा, हमने तो ऐसा कभी सुना नहीं और न ही लिखा है तथापि फिर एक बार जाँच कर लेने दो। आपने बताया कि माननीय लोखण्डे जी लातूर वालों ने एक पुस्तक में ऐसा लिखा है। आपकी पुस्तक का प्रमाण-पृष्ठ संख्या सब कुछ दे रखा है। लगता है कि आदरणीय श्री लोखण्डे जी ने किसी गप्पी से सुन-सुनाकर ऐसा लिख दिया है। उन जैसे सज्जन को अप्रामाणिक लेखन से बचना चाहिये। इतिहास-प्रदूषण, मिलावट, हटावट और बनावट ये पाप कर्म हैं। जिस विषय का ज्ञान न हो उससे बचना चाहिये। बिना जाँच-पड़ताल करके लिखने से लेखक को अपयश ही मिलेगा, साथ ही समाज की शोभा भी घटती है।

इस ग्रन्थ का नया संस्करण छप चुका है। इसमें बहुत कुछ परिवर्तन, परिवर्द्धन, संशोधन हमें करना पड़ा है। प्रस्तुत संस्करण में श्रीमान् विरजानन्द जी की आपत्ति की कतई गन्ध पाठक नहीं पायेंगे। विरजानन्द जी ने यह प्रश्न उठाकर भ्रम-भञ्जन का हमें अवसर देकर समाज का बहुत हित किया है।

मान्या कमला बहिन जी का प्रश्नः- मोहाली-पंजाब से एक स्वाध्यायशील दृढ़ आर्यदेवी बहिन कमला जी ने 'नवयुग की आहट' ऋषि जीवन में कभी पं. श्रद्धाराम के सहयोगी रहे लाहौर के भानुदत्त द्वारा फिरोज़पुर के आर्य अनाथालय में कन्याओं की शिक्षा की प्रशंसा करने की लिखित सम्मति का प्रमाण पूछा। उन्हें बताया गया कि यह दस्तावेज़ हमने परोपकारिणी सभा को सौंप दिया है। एक प्रति चामधेड़ा (हरियाणा) में श्री अनिल आर्य जी के पुस्तकालय को भी दी है। कोई भी देख सकते हैं। उन्हें यह भी बताया कि 'नवयुग की आहट' पुस्तक में ही पृष्ठ १३४ पर इन्हीं पण्डित भानुदत्त जी का कलकत्ता के 'भारतमित्र' में महर्षि के पक्ष में तथा देशभर के पौराणिक विद्वानों की धाँधली की निन्दा में छपे लेख का अवतरण भी महत्त्वपूर्ण तथा पठनीय है।

वैदिक-पथ के लेख परः- मान्य ज्वलन्त जी ने 'वैदिक पथ' के मनुस्मृति के अंक को देखने की प्रेरणा दी। पूज्य उपाध्याय जी की मनुस्मृति की भूमिका का प्रकाशन एक उत्तम कार्य है। इसके लिये पत्रिका को बधाई। छोटे टाइप को पढ़ने में कठिनाई तो होती है, परन्तु फिर भी ज्वलन्त जी का कहा मानकर पूरे अंक को देखा। इस अंक के अन्त में पूज्य उपाध्याय जी पर श्रीमान् भारतीय जी का एक लम्बा लेख है। इसमें एक नहीं कई भ्रामक बातें छप गई हैं। ज्वलन्त जी उपाध्याय जी पर इस लेखक के प्रामाणिक ग्रन्थ के साथ मिलान करना चाहें तो कर लें या फिर कोई और उपाय करें। भ्रान्ति-निवारण होना चाहिये, हम क्या लिखें? क्या बतावें? Philosophy of Dayanand पर विहंगम दृष्टि डालने से पता चल ही जायेगा कि उपाध्याय जी सन् १९३९ में सेवानिवृत्त हुये थे।

आर्य मुसाफ़िर महात्मा मुंशीराम जी की प्रेरणा से उपाध्याय जी लेख दिया करते थे, यह भी भ्रामक कथन है। केवल एक ही बार महाशय वज़ीरचन्द जी ने आदरपूर्वक एक पादरी के उत्तर में आपका लेख दिया था। इस पत्र की फाइल अजमेर जाकर देख लें। और अधिक कुछ न लिखना ही ठीक है।

आर्यो! हिम्मत करो-जोश दिखाओः- इस समय श्री दुर्गासहाय 'सुरूर' महाकवि पर नवप्रकाशित कुछ पुस्तकें हमारे सामने हैं। कुछ और भी प्राप्त होने वाली हैं। उर्दू के इस मूर्धन्य कवि पर हम बार-बार लिखते चले आ रहे हैं। उर्दू साहित्य के इतिहास लेखकों ने हिन्दू व सिख साहित्यकारों को तो निकाला ही, आर्यसमाजियों पर भी जम कर कृपा की। स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के परमभक्त महाशय गेंदाराम जी बठिण्डा के वंशज श्री जितेन्द्र कुमार जी वकील की धुन देखकर हमने भी महाकवि सुरूर को विषय बनाकर परोपकारी में आन्दोलन छेड़ दिया है। परोपकारी को कई गुणी मुसलमान भाई भी

पढ़ते हैं। वे हमसे सम्पर्क साध रहे हैं। मिलने भी आयेंगे।

हर्ष का विषय है कि अब दो-चार पुस्तकों में यह खुलकर स्वीकार किया गया है कि महाकवि सुरूर ने उर्दू साहित्य को नई दिशा दी। हूरों, गुलोबुलबुल की बजाय उर्दू कविता का मुख्य विषय मातृभूमि से प्रेम को बनाया। शहीदों पर लम्बी-लम्बी कवितायें रचीं। 'सुरूर' आर्यसमाजी थे, ऋषि दयानन्द के शिष्य और पं. लेखराम के नामलेवा थे-यह चर्चा भी पुस्तकों में आने लगी है। आर्यो! सुरूर जी पर हमारी पुस्तक 'हृदय की तड़पन' की प्रतीक्षा करें। अब उर्दू साहित्य के इतिहास में हम 'आर्य मुसाफिर', 'आर्य समाचार' मेरठ, 'आर्य गजट' और 'उन्नीस हिन्द' की विस्तृत चर्चा करवा कर ही चैन लेंगे। यदि मेरठ के आर्य भाई विशेष रूप से डॉ. सत्यपाल जी लोकसभा सदस्य और डॉ. वेदपाल जी 'उन्नीस हिन्द' की सन् १८९७ से १९२० तक की फाइलें खोजने में हमें सहयोग करें और मेरठ से ही प्रकाशित 'नोहाय ग़म' (पं. लेखराम जी पर मुसद्दस) उपलब्ध करवा दें तो आर्यसमाज का गौरव बढ़ेगा। मेरठ के समाजों की उस काल की रिपोर्टों में श्री सुरूर के मेरठ निवासकाल की घटनायें कुछ तो होंगी ही। अपना परोपकारी सुरूर जी का दुर्लभ चित्र दे रहा है। शीघ्र एक और चित्र भी परोपकारी में दिया जायेगा। उ.प्र. सरकार तथा भारत सरकार और उत्तराखण्ड सरकार के लिये यह बहुत लज्जाजनक है कि देशभक्त 'सुरूर' को तो भुला दिया गया और देश का विभाजन करवाने वाले इकबाल को महिमा-मण्डित करने का पाप हो रहा है। 'सुरूर' उर्दू के दिनकर, पन्त और बच्चन थे।

महर्षि दयानन्द सम्पूर्ण जीवन-चरित्र में और क्या है ?- 'सन्मार्ग सन्दर्शिनी सभा' कलकत्ता पर और भी कुछ जीवन-चरित्रों में लिखा गया, परन्तु पहली बार हमीं ने आर्य-सामाजिक पत्रों में यह लिखा था कि पूरे विश्व इतिहास में यह पहली घटना थी कि किसी सुधारक, विचारक के विरोध में उसके देश के प्रत्येक भाग के विद्वानों ने एकत्र होकर उसके विरुद्ध उसे सुने बिना ही सर्वसम्मत व्यवस्था दी और वह अद्वितीय विचारक महर्षि दयानन्द फिर भी अकम्प रहा। हमारा यह लेख पढ़कर पूज्य स्वामी सत्यप्रकाश जी ने अबोहर आकर इस विषय में हमसे विशेष चर्चा की।

१. आर्यो! हम इसे आर्यसमाज पर पहला घिनौना वार-प्रहार मानते हैं। सन् १८५७ की कल्पित कहानियाँ गढ़-गढ़ कर इतिहास-ज्ञान से सर्वथा शून्य लेखक ऋषि दयानन्द को १८५७ के विप्लव का कर्णधार बताने का पाप तो कर ही रहे हैं, परन्तु कलकत्ता की इस सभा को आर्यसमाज पर सबसे पहला आक्रमण बताने वाला लेख क्या किसी और ने लिखा? इस घटना को मुखरित न करना, क्या यह हमारी भूल नहीं है?

२. जैनियों में कुछ एक ने शरारत करके ठाकुरदास भाभड़ा को आगे करके सत्यार्थप्रकाश पर, ऋषि दयानन्द पर अभियोग चलाने की धमकी दे दी। कार्यवाही आरम्भ भी हो गई। हमने इस जीवन-चरित्र में इसे सत्यार्थप्रकाश पर प्रथम अभियोग सिद्ध करते हुए विस्तार से लिखा है। यह इसी जीवन-चरित्र की विशेषता है। इस घटना को भी मुखरित करने के लिये कुछ नहीं किया गया। महर्षि के साहस व शौर्य के कारण ठाकुरदास एकदम ठण्डा पड़ गया।

३. अभी-अभी किसी ने स्त्रियों में प्रचार की एक कल्पित कहानी गढ़कर ऋषि दयानन्द को भी उसमें लपेट लिया। यह प्रश्न जब चलभाष पर पूछा गया तो हमने कहा, ध्यान से इस ग्रन्थ के दोनों भागों को पढ़िये। नीर-क्षीर-विवेक हो जायेगा। आपकी तृप्ति हो जायेगी। कुछ संकेत भी दिये यथा-१. ऋषि दयानन्द जी जब वेद-भाष्य के अंकों के लिये सदस्य बना रहे थे। आर्थिक सहयोग चाहिये था तब बड़ौदा की राजमाता ने महाराज की धूम सुनकर अपने सचिव को भेजकर ऋषि से उपदेश लेना चाहा। ऋषि उसे समय दे देते तो वह पर्याप्त दान दे सकती थीं। ऋषि ने उसे क्या उत्तर दिया, यह इसी ग्रन्थ में पढ़ लीजिये। २. ऋषि ने अजमेर में रामस्नेही बाबों का सत्संग करने जा रही स्त्रियों को क्या कहा? इस ग्रन्थ में हमने क्या लिखा है, पढ़ लीजिये। ३. ऋषि ने उनका उपदेश सुनने की इच्छुक देवियों को क्या उत्तर दिया?

४. जोधपुर में अन्तिम दिनों में महारानी जी द्वारा किसी अपने पण्डित के लिये उपहार लाने वाली महिलाओं को अपने कक्ष में आता देखकर क्या कहा? इसे ध्यान से

किस-किस ने पढ़ा?

५. ऋषि जी का जबलपुर में और फिर गुरदासपुर में एक-एक ग्रुप फ़ोटो लिया गया। दोनों में एक भी महिला दिखाई न देगी। दोनों चित्र घर में लिये गये। आधुनिक युग में महर्षि दयानन्द ही एकमेव ऐसा विचारक और संन्यासी है, जिसने कभी किसी स्त्री के संग फोटो नहीं खिंचवाया। अंग्रेजी वाले बाबों की बात उनके नाम लेवा ही जानें। हमने इस सम्बन्ध में इस ग्रन्थ के दोनों भागों में धारदार टिप्पणियाँ की हैं। भाषा का ज्ञान, लिखना-पढ़ना और बात है, परन्तु इतिहास शास्त्र से प्राप्त ऊहा कुछ और ही होती है। दो-चार घटनाओं का ज्ञान प्राप्त करके हर कोई अपने आपको जीवनी लेखक मान लेता है। इससे केवल इतिहास प्रदूषण होता है और कुछ नहीं, तभी तो एक खोजी ने स्वामी सर्वदानन्द जी का संन्यास पूर्व नामकरण करके उन्हें 'मूलचन्द' नाम देकर बजवाड़ा ग्राम में उनका जन्म करवा दिया। वह लेखक तथा बजवाड़ा ग्राम दोनों ही धन्य-धन्य हो गये।

श्री राधेमोहन चल बसेः- पूज्य पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय के प्यारे शिष्य श्री राधेमोहन जी आर्य चल बसे। आपके निधन से आर्यसमाज की बहुत क्षति हुई है। आप पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय पुरस्कार निधि के प्रधान थे। लम्बे समय से (आधी शताब्दी से भी ऊपर) हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। वह एक सामान्य टेलर मास्टर थे। पूज्य उपाध्याय जी के सम्पर्क तथा सत्संग से जाने-माने विद्वान् बन गये। उपाध्याय जी के चरणों में बैठकर वर्षों शिक्षा प्राप्त करते रहे। उनकी सेवा भी बहुत किया करते थे। उपाध्याय जी अरबी तो जानते थे। अरबी के विशेष ज्ञान की प्राप्ति के लिये कई वर्ष तक मौलवियों से अरबी पढ़ते रहे। उनके अरबी के टीचर की व्यवस्था श्री राधेमोहन जी ही करते रहे।

उपाध्याय जी का पत्र-व्यवहार भी वर्षों पर्यन्त आप ही ने किया। मौलाना अली अकबर (उपाध्याय जी के युवा अरबी टीचर) ने पूज्य पण्डित जी पर एक विशेष लिखा था। उसने वह लेख प्रकाशनार्थ राधेमोहन जी द्वारा ही हमें पहुँचाया । वह लेख आज भी हमारे पास है। आप ही पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार निधि के जन्मदाता थे। परोपकारिणी सभा के बहुत सहयोगी विद्वान् थे।

श्री सत्यप्रकाश गुप्त जी भी नहीं रहेः- आर्यसमाज सीताराम बाजार के एक पुराने कर्णधार, धर्मात्मा, वेद-भक्त, प्रभु-भक्त आर्य श्री सत्यप्रकाशजी गुप्त भी चलते-चलते चल बसे। **आप पूज्य देहलवी जी के पक्के भक्त, प्रेमल स्वभाव, मधुरभाषी आर्य थे। देहलवी जी पर ग्रन्थ** लिखते हुए हमें दिल्ली के केवल एक ही आर्य से कुछ संस्मरण मिले और वह आप थे। आयु में आप इस लेखक से छोटे थे। ५५-५६ वर्ष से हमारा आर्यत्व का अटूट नाता रहा। अपने पीछे समाज को आर्य सन्तान देकर संसार से गये हैं-यह एक आनन्ददायक बात है। आर्यजाति के लिये दोनों आर्य पुरुषों का जीवन प्रेरणा देता रहेगा। परोपकारी इन दोनों निष्ठावान् कर्मठ सेवकों को श्रद्धा सुमन भेंट करता है।

आगामी ऋषि मेला
२७, २८, २९ अक्टूबर २०१७, शुक्र, शनि, रविवार
को ऋषि उद्यान, अजमेर में होगा

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन-चरित्र प्रचार-प्रसार की भव्य योजना

विचार किसी भी देश, समाज व जाति की अमूल्य निधि (सम्पत्ति) है। जिसके पास में श्रेष्ठ विचार नहीं या फिर विचार को फैलाने के साधन नहीं हैं या फिर जो व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपने विचारों की अवहेलना करते रहते हैं, उनका अस्तित्त्व भी एक दिन समाप्त प्राय: हो जाता है। आज हर सम्प्रदाय, समाज, समूह व देश अपने विचारों का प्रचार-प्रसार बड़ी प्रबलता से हर क्षेत्र में व हर साधन से कर रहा है, लेकिन काफी समय से आर्यसमाज में वैचारिक शिथिलता देखी जा रही है। इस शिथिलता को दूर करने का मात्र एक ही उपाय है कि हम सभी आर्य जन ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत **अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का प्रचार नये शिक्षित लोगों में करें।** इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सभा के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला दिल्ली में वर्ष २०१४ से लगातार इन ग्रन्थों का नि:शुल्क वितरण किया जा रहा है।

सत्यार्थप्रकाश ही क्यों?-१. यदि कोई व्यक्ति, समाज, समूह, संस्था या राष्ट्र एक ग्रन्थ (पुस्तक) पढ़कर विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो यह सत्यार्थप्रकाश से ही सम्भव है। २. आज के दूषित वातावरण में वैदिक वाङ्मय को ठीक-ठीक जानने हेतु, पढ़ने-पढ़ाने हेतु प्रथम सत्यार्थप्रकाश और महर्षि के अन्य ग्रन्थों का पढ़ना-जानना अत्यन्त आवश्यक है। ३. दर्शनशास्त्र, इतिहास, भारतीय परम्परा, कर्त्तव्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य तथा मानवता आदि क्या हैं? - यह सारी जानकारी सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होती है। ४. पाखण्ड, कुरीतियों व बुराइयों का नाश भी सत्यार्थप्रकाश से सम्भव है। ५. सत्यार्थप्रकाश व ऋषि के अन्य ग्रन्थों की उपस्थिति में कोई विधर्मी अपनी शेखी नहीं मार सकता तथा किसी भी हिन्दू को बहकाकर विधर्मी नहीं बना सकता। ६. सत्यार्थप्रकाश के प्रभाव ने न जाने कितनों का जीवन ही बदल डाला। सत्यार्थप्रकाश के जोड़ की दूसरी पुस्तक दुर्लभ है, जिसमें ज्ञान का अमूल्य खजाना भरा पड़ा है। इसलिए इसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है। **योजना का विवरण निम्न प्रकार का होगा**-१. सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में आकार लगभग ६०० पृष्ठ व साइज डिमाई आकार में होगा। लागत मूल्य १००/- रुपये प्रति पुस्तक। २. ऋषि जीवन चरित्र हिन्दी में लगभग १६४ पृष्ठ व साईज डिमाई आकार में। लागत मूल्य ६०/- रुपये प्रति पुस्तक। ३. महर्षि द्वारा रचित पुस्तक आर्याभिविनय हिन्दी में ६४ पृष्ठ व साइज डिमाई आकार में, लागत मूल्य ३०/- रु. प्रति पुस्तक।

नोट-यह साहित्य वैचारिक क्रान्ति के लिए व वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार के लिए गैर आर्यसमाजी सज्जनों व संस्थानों आदि को **नि:शुल्क या अल्प मूल्य में** वितरित किया जायेगा। साहित्य का ठीक-ठीक उपयोग हो व योग्य शिक्षित विचारवान् व्यक्तियों तथा **संस्थानों तक पहुँचे** इसके लिए वितरण व्यवस्था की जाएगी। योग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का चयन कर कार्य में नियुक्त किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, संस्था आदि से एक फार्म भरवाया जायेगा, जिसमें उनका पूर्ण पता सम्पर्क आदि हो, जिससे भविष्य में परिणाम का मूल्यांकन किया जा सके। ग्रन्थों की प्रामाणिकता, शुद्धता व साज-सज्जा तथा सुन्दरता का विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस प्रचार-प्रसार योजना का उद्देश्य सत्यार्थप्रकाश व महर्षि के जीवन-चरित्र के प्रचार-प्रसार के माध्यम से मानव मात्र का कल्याण करना है। यह प्रचार-प्रसार मुख्य रूप से शिक्षित गैर आर्यसमाजी लोगों के लिए होगा। यह कार्य पूर्णरूप से महर्षि के मन्तव्यों के अनुरूप हो इसका विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस कार्य की सफलता के लिए सभी आर्यजनों से, समाजों से व संस्थानों से निवेदन है कि इस महान् कार्य में तन-मन-धन से अपना सहयोग करने व अपने इष्ट मित्रों को भी सहयोग करने की प्रेरणा करें।

नोट-अपना आर्थिक सहयोग आप परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम प्रेषित करते समय **सत्यार्थप्रकाश प्रचार-प्रसार शीर्षक** अवश्य लिखें। धन प्रेषित करने हेतु आप चैक, ड्राफ्ट व सीधे राशि सभा के बैंक खाते में जमा करवाकर जमा पर्ची की प्रतिलिपि प्रेषित कर देवें या फिर ईमेल, दूरभाष द्वारा सूचित कर सकते हैं। धन्यवाद।

खाता धारक का नाम-**परोपकारिणी सभा, अजमेर।**
१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आइ**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

नोट : इस योजना हेतु दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत कर मुक्त होगा।

सम्पर्क : मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

बालकों की शिक्षा

-आचार्य उदयवीर शास्त्री

आधुनिक 'कपिल' की उपाधि से विख्यात् आर्यसमाज के दार्शनिक विद्वान् आचार्य उदयवीर शास्त्री ने लेखन का अद्वितीय कार्य किया है। उनके लेख तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहे। उनकी पुस्तकें तो आज उपलब्ध हैं, परन्तु सर्वजनोपयोगी विषयों पर प्रकाशित उनके लेख आज जनसामान्य से अछूते ही हैं। उनके ज्ञान-सागर से प्राप्त कुछ मोतियों को परोपकारी लेखमाला के रूप में प्रकाशित कर रहा है। आशा है पाठक इससे लाभ उठायेंगे। **-सम्पादक**

बालकों के शिक्षण की समस्या और उसके समाधानों की परम्परा बहुत पुराने काल से चली आ रही है। यह कहना अतिरञ्जित न होगा कि यह क्रम आदि सृष्टि-काल से चालू है। विभिन्न देशों के शिक्षाविदों ने अपने-अपने काल में अपने समाज, अपने विचार, आवश्यकता एवं साधनों के अनुसार शिक्षा की समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया है। इस दिशा में भारतीय राष्ट्र की परम्परा अत्यन्त प्राचीन प्रतीत होती है। भारतीय प्राचीन ऋषि-मुनियों व आचार्यों ने इस मार्ग को जितना प्रशस्त किया है, उसका आज भी उतना ही महत्त्व है। यदि शिक्षा के उन विधि-विधानों की उपेक्षा न करके उनको किसी अंश तक आचरण में लाया जा सके, तो वर्तमान शिक्षा--समस्याओं का बड़ी सीमा तक समाधान अनायास हो सकता है।

वय के अनुसार शिक्षा को तीन भागों में बाँटा जा सकता है। १. शिशु-काल की शिक्षा-पाँच या छः वर्ष की आयु तक। २. मध्यकाल अथवा किशोर वय की शिक्षा, जिसे वर्तमान काल में माध्यमिक अथवा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा का स्तर कहा जाता है। ३. विश्वविद्यालय की शिक्षा।

१. पाँच छः वर्ष की आयु तक बालक को शिक्षा देने का उत्तरदायित्त्व माता-पिता पर रहता है। माता-पिता का घर बालक का ऐसा शिक्षणालय है, जहाँ पर सीखी हुई बातें आयुपर्यन्त उसका साथ नहीं छोड़तीं। उस काल में बालक की वह मस्तिष्क-स्लेट अत्यन्त स्वच्छ-साफ रहती है, जिस पर सब प्रकार की सीख अंकित हुआ करती है। माता-पिता की पारस्परिक बातचीत, चेष्टा एवं सब प्रकार के आचरण का अनुकरण करने की भावना बालक में स्वभावतः जागृत रहती है। यदि माता-पिता उस वय के बालक की जानकारी में कोई ऐसी अवाञ्छनीय चेष्टा या व्यवहार करते हैं, तो बच्चे के मस्तिष्क पर उसका प्रभाव हुए बिना रह नहीं सकता। यह निश्चित है कि वह प्रभाव किसी भी तरह बच्चे के लिए अनुकूल नहीं। वे संस्कार कभी-कभी इतना गहरा प्रभाव रखते हैं, कि पर्याप्त समय तक साधनों का अभाव होने से प्रसुप्त रहने पर अचानक रूप से उभर आते हैं और बालक एवं अभिभावकों की उद्विग्नता का कारण बन जाते हैं। उस समय माता-पिता भूल जाते हैं, इस बात की कल्पना भी नहीं कर पाते कि यह उनका ही बोया हुआ बीज है, जो इस समय अंकुरित हो रहा है। उसका प्रत्यारोप बालक पर होता है, और उसकी प्रतिक्रिया बालक के जीवन के लिए एक भयावह काँटा बन जाती है। उन स्थितियों के लिए बालक मारा-पीटा जाता है, धमकाया व डराया जाता है। चाहे उस समय वह शारीरिक असमर्थता के कारण कोई विरोध न कर सके, परन्तु प्रतिशोध की भावना उसके मस्तिष्क में घर कर जाती है, जो अवसर आने पर भंयकर उत्पातों का कारण बनती है।

आये दिन ऐसी घटनाएँ सामने आती रहती हैं। कोई परिवार ऐसा न होगा, जहां बच्चों के प्रति ऐसा अवाञ्छनीय व्यवहार न होता हो। इसलिए बालक की प्राथमिक शिक्षा के लिए माता-पिता का बहुत सतर्क रहना अत्यन्त आवश्यक है। इस काल में शिक्षा के बाह्य साधनों की आवश्यकता नहीं रहती। पालने पर लेटा हुआ बच्चा हाथ-पैर चलाता हुआ अपनी आंखों को फाड़कर गहरी आश्चर्य भरी दृष्टि से देखता हुआ, विचित्र आकर्षक आकृति से अपने प्रसादपूर्ण भावों को अभिव्यक्त करता हुआ शिक्षा का आदान किया करता है। बालक के अभ्युदय के लिए माता-पिता का कर्त्तव्य है कि वे कभी बालक की जानकारी में परस्पर रोषपूर्ण संघर्ष की बातचीत न करें, सदा एक-दूसरे के प्रति अनुकूल व्यवहार रखें, बालक के थोड़ा

समझदार होने पर उसे कभी झूँठ बोलकर बहलाने का प्रयास न करें। यदि बच्चा किसी बात के लिए आग्रह करता है, तो यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि वह ऐसा क्यों कर रहा है, आग्रह के उस कारण को दूर करना अभीष्ट है। ऐसी स्थिति में बच्चे को मारना-पीटना या डराना-धमकाना उसकी अनुकूल भावनाओं के लिए बड़ा घातक होता है। बालक से कभी ऐसा प्रण नहीं करना चाहिए, जिसे आप पूरा न कर सकें। अपने सब आवश्यक दैनिक कार्य समय पर करने की बालक को आदत डालनी चाहिए। इस आयु में सीखी व्यवस्था बालक को जीवन-भर सुव्यवस्थित रखने में सहायक होती है। ये सब दिग्दर्शन मात्र साधारण बातें हैं, पर इनके परिणाम असाधारण होते हैं।

बालक के तीन वर्ष का होने पर माता-पिता उसे स्नेहपूर्ण बर्ताव के साथ अक्षराभ्यास करायें। उसकी रुचि न होने पर कभी पढ़ने के लिए आग्रह न करें। पढ़ते समय ठीक न पढ़ने पर कभी अनुत्साहित न करें। 'तू दिन-भर खेलता है, पढ़ता कुछ नहीं, तुझे कुछ नहीं आयेगा, तू बड़ा मूर्ख है', इत्यादि बातें बालक को कभी न कहें, प्रत्युत इसके विपरीत सदा उसे प्रोत्साहित करें। 'तू बड़ा समझदार है, तूने खूब ठीक पढ़ा, शाबाश! बहुत अच्छा' इत्यादि वाक्य बोलकर सदा उसका उत्साह बढ़ाते रहें। जो ठीक न पढ़े, उसे स्वयं बतलाते जावें, प्रकट यही करें, जैसे बालक स्वयं ठीक पढ़ रहा है। इस प्रकार कुछ ही दिनों में बालक अक्षरों को सीखकर उन्हें आपस में जोड़कर नये शब्द और छोटे-मोटे वाक्य पढ़ने लगता है। अध्ययन में उसकी रुचि बढ़ जाती है। माता-पिता का जितना वात्सल्य बालक के प्रति और बालक का जितना आकर्षण माता-पिता के प्रति होता है, यह स्थिति अन्यत्र संभव नहीं। बालक के प्रति माता-पिता के समकक्ष वात्सल्य को उभारकर उनके प्रति बालक के आकर्षण को कोई व्यक्ति जीत सके, यह अत्यन्त दुर्लभ है। बाल्यकाल की शिक्षा में इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये कि बालक की कोमल और नैसर्गिक भावनाओं को किसी प्रकार के व्यवहार से ठेस न पहुँचने पावे। ऐसे माता-पिता इस संसार में ही सबके लिये स्वर्ग का निर्माण करते हैं।

यदि माता-पिता के द्वारा बालक की उपयुक्त शिक्षा सुसम्पन्न हो सके, तो आधार-शिला दृढ़ होने पर भवन के दृढ़ एवं स्थायी होने में किसी तरह की आशंका का कोई अवसर नहीं रहता, समाज की सर्वात्मना पुष्टि के लिये यह आवश्यक है। बालक को प्रारम्भ से ही धर्मरूप में सिखाई जाने वाली बातों की साम्प्रदायिक कह या समझकर उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये।

विशेष सूचना

परोपकारी-पत्रिका के सभी पाठकों एवं आर्यजनों से निवेदन है कि डॉ. धर्मवीर जी से सम्बन्धित कोई पत्र, चित्र, ऑडियो, वीडियो आदि आपके पास हों तो कृपया हमें सूचित करें।

डॉ. धर्मवीर जी के जीवन पर प्रकाशित होने वाली स्मारिका के लिए जिन भी महानुभावों के पास उनसे सम्बन्धित कोई भी संस्मरण, विचार या कविता आदि हों, वे भी अतिशीघ्र सभा को भेजने का कष्ट करें, ताकि आपके लेख स्मारिका में प्रकाशित किये जा सकें।

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४

ई-मेल-psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज,

अजमेर-३०५००१ (राज.)

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष-साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़कर ये प्रवचन निःशुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष-ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिखकर सर्च करें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर **'मन्त्री, परोपकारिणी सभा'** अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

विद्वान् स्त्रियों को योग्य है कि अच्छी परीक्षा किए हुए पदार्थ को जैसे आप खायें वैसे ही अपने पति को भी खिलावें कि जिससे बुद्धि, बल और विद्या की वृद्धि हो और धनादि पदार्थों को भी बढ़ाती रहे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४२

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

लोकोत्तर धर्मवीर–२

-तपेन्द्र वेदालंकार आई.ए.एस. (से.नि.)

१९८५ में मेरा पदस्थापन अजमेर था, ऋषि उद्यान व सभा में आना-जाना था, परन्तु कम। ऋषि उद्यान के सरस्वती भवन में ऋषि बोधोत्सव मनाया जाता था, उस वर्ष भी मनाया गया। मुझे मुख्य अतिथि बनाया गया। मैं व मेरी धर्मपत्नी कुसुम बाला जी उत्साहित होकर उत्सव में गये। २५-३० लोग थे। उत्सव उपरान्त भोजन की व्यवस्था थी। सरस्वती भवन के बरामदे में बैठने के बाद एक सज्जन आये और उन्होंने भोजन के कूपन माँगे। कूपन लेना है- हम दोनों को जानकारी नहीं थी और हमने कूपन लिये भी नहीं थे। मेरे पास बैठे धर्मवीर जी तथा कुसुमबाला जी के पास बैठी श्रीमती ज्योत्स्ना जी ने बात को संभाला। आज ऋषि उद्यान में प्रतिदिन सैंकड़ों लोग भोजन करते हैं। बरामदे के स्थान पर विशाल भोजनशाला में भोजन कराया जाता है। भोजन बनाने की आधुनिक व्यवस्था है। ऋषि उद्यान में लगने वाले योग शिविर, आर्य वीर दल आदि शिविरों के अवसर पर सैकड़ों लोगों की भोजन व्यवस्था बिना कूपन होती है। ऋषि मेले के अवसर पर हजारों लोग भोजन करते हैं, वहाँ जरूर कूपन व्यवस्था होती है, वह भी संख्या जानने के लिए, ताकि तदनुसार भोजन बनाया जा सके। इस परिवर्तन का श्रेय सत्यता से किसी अन्य को नहीं दिया जा सकता सिवाय धर्मवीर जी के। धर्मवीर जी के निर्देश थे कि भोजन के समय जो आवें, उन्हें मना नहीं करना। कहाँ से आये हो, किस सम्प्रदाय के हो, यह नहीं पूछना, सत्कारपूर्वक भोजन करा देना। उनका विचार था कि सुरक्षा की दृष्टि से किसी विशेष मामले में-कौन, कहाँ से आदि पूछना कभी-कभी ठीक हो सकता है, परन्तु सद्भावना की दृष्टि से गलत है। वे श्रीगंगानगर के एक चौधरी की घटना बताया करते थे-चौधरी जी तीन दिन ऋषि उद्यान में रहे, किसी ने कुछ पूछाताछी नहीं की। चलने लगे तो बोले कोई मेरे लायक काम हो तो बताना। उस वर्ष श्रीगंगानगर से ८० बोरी अन्न संग्रह चौधरी जी ने कराया।

परोपकारिणी सभा के एक सम्माननीय मन्त्री जी थे, उनका देहान्त हो गया। सबने अपने उद्गार प्रकट किये- कितना अच्छा कार्य था उनका, अब आगे कैसे संभलेगा, कौन संभालेगा आदि। मन्त्री जी के एक पारिवारिक सदस्य ने झट मन्त्री जी के बेटे का नाम सुझा दिया-कहा, इन्हें मन्त्री बना दो। सभा के हित को सर्वोपरि मानने वाले न्यायप्रिय धर्मवीर जी ने प्रस्तावित नाम का विरोध किया, कहा- आधार, योग्यता होनी चाहिये, पारिवारिक परम्परा नहीं। बहुत बड़े आर्य समाजी नेता सभा के ट्रस्टी थे, सभा में एक स्थान रिक्त हुआ, ट्रस्टी जी ने अपनी पत्नी का नाम आगे बढ़ाया, कुछ उनके शुभचिन्तकों ने भी कहा, परन्तु धर्मवीर जी फिर योग्यता पर अड़ गये तथा ट्रस्टी जी की पत्नी ट्रस्टी नहीं बन सकीं। कुछ वर्षों पूर्व की बात है- किसी एक सज्जन को ट्रस्टी बनाने के लिए कुछ व्यक्तियों ने लॉबिंग की तथा पूरी तैयारी के साथ ऋषि-मेले में आये। मेरे से धर्मवीर जी ने चर्चा की। मैंने कहा उन सज्जन की तो आप प्रशंसा करते रहे हैं, वे दान भी खूब देते हैं फिर क्या दिक्कत है? बोले जातिगत आधार पर ट्रस्टी नहीं बनाने चाहियें। सभा से ऐसी बुराई दूर ही रहनी चाहिये। सत्यता के लिए लड़ना-अड़ना तो कोई धर्मवीर जी से सीखे।

निन्दन्तु नीतिनिपुणाः यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।।

इस श्लोक के कठिनतम तथा अन्तिम भावों को उन्होंने आत्मसात् कर लिया था। निन्दा-स्तुति, सम्पन्नता- अभाव, जीवन और मृत्यु उनके लिए न्याय से-सत्य से- वेद-पथ से तनिक भी अहम् नहीं थे, किञ्चित् भी महत्त्वपूर्ण नहीं थे। उन्होंने इन सिद्धान्तों को आज के युग में भी अपने जीवन में उतार लिया था, वस्तुतः जिया था।

सभा के वर्तमान मन्त्री जी को सभा का ट्रस्टी इसलिए बनाया गया था कि वे धर्मवीर जी को ठीक कर सकें, उनका विरोध करें। जब धर्मवीर जी संयुक्त मन्त्री बनाये

गये तो तत्कालीन मन्त्री ने उनके साथ काम करने से मना कर दिया था तथा त्याग-पत्र की पेशकश की थी। लेकिन सत्य अधिक समय तक छिपा नहीं रह सकता, स्वर्ण की पहचान स्वर्णकार कर ही लेता है। धर्मवीर जी के लोकोत्तर गुणों को वर्तमान मन्त्री जी ने भी जाना तथा तत्कालीन मन्त्री जी ने भी माना। विरोध के लिए ट्रस्टी बनाये गये ओममुनि जी संयुक्त मन्त्री व मन्त्री बने तथा धर्मवीर जी के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य किया। तत्कालीन मन्त्री श्री गजानन्द जी प्रधान पद पर सुशोभित हुए। ओममुनि जी, गजानन्द जी व धर्मवीर जी साथ मिलकर परोपकारिणी सभा को नई ऊँचाइयों तक ले गये। एक के बाद एक प्रकल्प पूर्ण होते चले गये, सभा के प्रति आर्यजनों की निष्ठा मजबूत होती चली गयी। रुग्णता के कारण श्री गजानन्द जी ने कुछ वर्ष पूर्व प्रधान बनने में असमर्थता व्यक्त कर दी। सभा-मन्त्री धर्मवीर जी के नेतृत्व में पूरे उपस्थित सभासद् सरस्वती भवन में मीटिंग में कई घण्टे तब तक बैठे रहे, जब तक श्री गजानन्द जी ने पुनः प्रधान बनना स्वीकार नहीं कर लिया। स्वामी ओमानन्द जी महाराज, स्वामी सर्वानन्द जी महाराज व श्री गजानन्द जी आर्य जहाँ धर्मवीर जी से अतिशय स्नेह करते थे, वहीं उनका धर्मवीर जी पर अटूट विश्वास था कि वे जो कार्य करेंगे, सभा के हित में ही होगा, पुनरपि धर्मवीर जी ने सभा के पद पर रहते हुए कभी सीमा रेखा का उल्लंघन नहीं किया। संभवतः यही कारण रहा होगा कि ये तीनों प्रधान धर्मवीर जी का अत्यधिक सम्मान भी करते थे।

धर्मवीर जी प्रधान बनने के बाद जब श्री गजानन्द जी आर्य के निवास स्थान पर पहली बार गये तो आर्य जी एवं माताजी ने द्वार पर आकर उनका मालाओं आदि से भव्य एवं अकल्पनीय सत्कार एवं नमन किया। नम्रता की मूर्ति श्री गजानन्द जी आर्य जो आज भी सभा के संरक्षक हैं, उन्होंने आचार्य धर्मवीर जी के पैर छूकर प्रणाम करना चाहा, धर्मवीर जी ने रोका तो बोले-विद्वान् व पण्डित के पैर छूकर नमन करने का अधिकार मुझे है, आप नहीं रोक सकते। यह श्री गजानन्द आर्य जी की महानता तो है ही, परन्तु इस प्रकार के सत्कार व नमन के लिए धर्मवीर जैसी योग्यता व पात्रता होनी भी आवश्यक है।

बनावट धर्मवीर जी को छू भी नहीं सकी थी। वे सहज थे, सरल थे, जो थे वह थे। उनमें दिखावा, प्रदर्शन कुछ था ही नहीं। आज के समय में पत्र-पत्रिकाओं में नाम व फोटो छपाने की होड़ लगी हुई है-वे इसके बिल्कुल विपरीत थे। दूरदर्शन के आस्था चैनल पर रिकॉर्डिंग कराने को पहले तो तैयार ही नहीं हुए- फिर बोले-मेरे सामने श्रोता हों तो मैं स्वमन से स्वाभाविक रूप से बोल सकता हूँ, उसी समय रिकॉर्डिंग कर लें। जब उन्हें बताया गया कि रिकॉर्डिंग की गुणवत्ता ठीक नहीं होती तो तैयार हो गये। क्योंकि यह सब आर्य समाज के लिए, वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार के लिए था। एक दिन रिकॉर्डिंग के लिए जा रहे थे, मुझसे बोले-चलो। मुझे तो उन्हें सुनना था तुरन्त साथ हो लिया। रिकार्डिंग के बाद बोले-क्या गलतियाँ थीं? मैंने कहा-बहुत अच्छा था। बोले, बताओ पूर्ण तो कोई हो नहीं सकता। मैंने उस समय तो नहीं-बाद में भोजन के लिये जाते समय उन्हें कुछ सुझाव दिये, जो उन्होंने तुरन्त मान लिये। यह उदारता आज के विद्वानों में मिलना असम्भव नहीं तो दुर्लभ जरूर है। आज हम चार अक्षर सीख लेते हैं तो अपने से बड़ा विद्वान् किसी को नहीं मानते, चार पंक्तियाँ बोल लेते हैं तो अपने को बड़ा वक्ता समझने लगते हैं। प्रकाण्ड विद्वान् एवं अद्‌भुत, एकमेव वक्ता होते हुए भी अहंकार कभी धर्मवीर जी के समीप आया ही नहीं था, सहजता ही उनका श्रृंगार करती थी। वे कहा करते थे, मंच, माइक, फोटो, नाम व अखबार जिसे प्रिय हैं, वह विचार के लिए काम नहीं करता, अपने लिए काम करता है। ऐसा व्यक्ति अपना काम करता है, समाज का काम नहीं करता।

एक शोक सभा व शान्ति यज्ञ में मेरठ जाना हुआ। मैं भी साथ था। धर्मवीर जी ने प्रातः कुर्ता पहना तो कुर्ता गले के पास से काफी फट गया था। मैंने ध्यान दिलाया तो बोले, क्या फर्क पड़ता है? उसी कुर्ते को पहने हुए सारे कार्यक्रमों में सम्मिलित हुए और सचमुच कोई अन्तर नहीं पड़ा- न उनके सम्बोधन में, न उनके सम्मान में। सबकी निगाहें तो उनके असाधारण व्यक्तित्व पर थीं। उनके व्यक्तित्व का आकर्षण ही ऐसा था, किसी को फटा कुर्ता कैसे दिखायी देता?

आचार्य धर्मवीर जी सिद्धान्त में दृढ़ व व्यवहार में उदार थे। सिद्धान्त की रक्षा के लिए वे किसी भी सीमा तक जा सकते थे, अपमान सह सकते थे, नुकसान सह सकते थे, अपयश सह सकते थे, परन्तु किसी विरोधी के प्रति उनके मन में आक्रोश या बदले की भावना नहीं देखी गयी। व्यवहार में उनका एक और सिद्धान्त था-वे किसी से संवादहीनता नहीं करते थे। एक विद्वान् ने कई बार सार्वजनिक तौर पर उनका अनादर किया। कुछ शुभचिन्तकों ने कहा-आप समर्थ होते हुए भी उनको पाठ नहीं पढ़ाते। कहने लगे, इस व्यक्ति ने लगभग ४० वर्ष विद्या प्राप्ति में लगाये हैं, आर्यसमाज में ऐसे कम विद्वान् हैं, जिन्होंने इतना समय केवल विद्या अध्ययन हेतु लगाया हो, अत: वे प्रशंसा के पात्र हैं। उनकी एक त्रुटि से वे हेय नहीं हो जाते। विद्या व्यवहार में आवेगी तो त्रुटियों में कमी आ जावेगी। उन विद्वान् से व्यवहार में भी उन्होंने सदाशयता बरती तथा संवाद भी रखा।

धर्मवीर जी नाम के धर्मवीर नहीं थे, सचमुच के थे। धर्म व अधर्म का शास्त्रीय ज्ञान उनको इतना था कि वे महीनों केवल इस विषय पर ही व्याख्यान दे सकते थे। व्यवहार काल में धर्म का, सिद्धान्तों का, वेदाज्ञाओं का पालन वे पूर्ण सजगतया करते थे। उन्होंने कभी जान-बूझकर अधर्म नहीं किया। देहावसान से लगभग १५ दिन पूर्व हमारे घर आये थे। मैंने निवेदन किया कि अब आप युवा नहीं हैं, हर दिन बाहर रहने, प्रचार करने से आपके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर पड़ सकता है। हँसकर बोले, मजदूर मजदूरी नहीं करेगा तो खायेगा क्या? वे महर्षि के इतने भक्त थे कि अपने को मजदूर मानते थे तथा उससे जो लाभ समाज को मिलता, उसे मजदूरी। मैंने कहा, आप कुछ समय निकालकर लेखन कार्य करें, जिससे आपकी उपलब्ध अथाह विद्या चिरकाल तक अधिक जनों के काम आ सकेगी व आपको भी भागदौड़ से थोड़ा विश्राम मिल जावेगा। बहुत आग्रह होता देखा तो महाभारत का यह श्लोक सुनाकर हँस दिये:-

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः,
जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः।
केनापि देवेन हृदिस्थितेन,
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।।

इससे बड़ी निरभिमानता क्या हो सकती है कि जीवन भर धर्म का पालन व अधर्म से दूर रहने वाला व्यक्ति उक्त श्लोक सुनाता है कि उसकी धर्म में प्रवृत्ति नहीं और अधर्म से निवृत्ति नहीं। ईश्वर के प्रति श्रद्धातिरेक देखिये कि आचार्य धर्मवीर जी जो कुछ कर रहे थे, उसे ईश्वर के द्वारा नियुक्त मानते हुए करते थे। इस श्लोक से उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि वे जानते थे कि शरीर को विश्राम की आवश्यकता है तथा वे अपने शरीर से ज्यादा काम ले रहे हैं, परन्तु वैदिक धर्म के प्रचार के समक्ष उन्होंने शरीर को वरीयता नहीं दी, क्योंकि उनके अन्दर बैठा देव उन्हें वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के लिए समर्पण का आदेश दे रहा था। इसी आदेश की पालना करते-करते समाज को जगाने वाला धर्मवीर स्वयं चिरनिद्रा में सो गया।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर की पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल अग्नि के बीच में उनका होम कर शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,

जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन-जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए 'आस्था-भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग-यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था-भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था-भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर जी** के वेद-प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ् जी** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित् जी** के प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था-भजन' (चैनल) डिश-टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा-स्काई, वीडियोकोन, बिग-टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार-बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केबल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

स्वामी श्रद्धानन्द जी
जितना गर्व करें, उतना थोड़ा

-धर्मेन्द्र जिज्ञासु

मुंशीराम जी के जीवन का प्रारम्भिक समय कृष्ण-पक्ष जैसा था। महर्षि दयानन्द जी के संसर्ग के साथ उनके जीवन का शुक्ल-पक्ष प्रारम्भ होता है, वे महात्मा मुंशीराम बन जाते हैं। जैसे पूर्णिमा का चन्द्र दीप्तिमान् हो उठता है वैसे ही वे भी स्वामी श्रद्धानन्द जी के रूप में जनता के हृदयाकाश में चमकने लगते हैं।

स्वामी श्रद्धानन्द जी के जिन जीवन प्रसंगों की बार-बार चर्चा होती है, वे हैं- गुरुकुल स्थापना, कन्या विद्यालय, शुद्धि, पत्रकारिता, दलितोत्थान, चाँदनी चौक में संगीनों के सामने सीना अड़ाना, वायकॉम सत्याग्रह, जामा-मस्जिद में प्रवचन, गुरु का बाग सत्याग्रह, अमृतसर कंग्रेस का सम्मेलन तथा अकाल तख्त से सम्बोधन। इन ग्यारह प्रसंगों की चर्चा बार-बार की जाती है। लेकिन उनके जीवन की और भी कई ऐसी घटनायें हैं, जिन पर आर्यजन जितना भी गर्व करें-थोड़ा है। इतिहास-सागर के प्रकाश-स्तम्भरूपी कुछ ऐसे ही प्रसंग यहाँ प्रस्तुत हैं-

१. स्वामी जी के आने तक अदालत नहीं उठेगी- मुलतान के रईस चौधरी रामकृष्ण जी ने महात्मा मुंशीराम जी को बुद्ध गाँव में गुरुकुल खोलने के लिए धन, भूमि तथा एक बंगला दान में दिया। कुछ वर्ष बाद चौधरी साहब किसी कारण नाराज हो गए-उन्होंने ऐसी परिस्थितियां पैदा कर दीं कि गुरुकुल को पुनः दीवान सावनमल मूलराज के पुराने बंगले में ले जाना पड़ा।

सन् १९१७ ई. में आर्य प्रतिनिधि सभा ने चौधरी साहब पर हर्जाने का दावा कर दिया। चौधरी साहब पैसे के बल पर मुकदमे को टलवाते रहे। सन् १९१९ में चीफ कोर्ट लाहौर ने मुकदमा जल्दी निबटाने का आदेश दिया।

अदालत ने स्वामी श्रद्धानन्द जी को गवाही के लिए सम्मन भेजा। स्वामी जी निश्चित तिथि को लाहौर से मुलतान आने के लिए कराची मेल ट्रेन में सवार हुए। स्वामी जी उस समय तक सम्पूर्ण पंजाब में सुप्रसिद्ध हो चुके थे। मुलतान शहर को उनके स्वागत के लिए सजाया गया। स्टेशन मास्टर ने ट्रेन के डेढ़ बजे तक मुलतान पहुँचने की सूचना दी। परन्तु हड़प्पा स्टेशन (सिन्धु सभ्यता वाला) पर कालका मेल का इंजन खराब हो गया। स्टेशन पर हजारों लोग उनका इन्तजार कर रहे थे।

उस समय न्यायाधीश पद पर एक मुसलमान युवक था, जो इंग्लैण्ड से उपाधि लेकर आया था। उसने घोषणा कर दी कि जब तक स्वामी जी गवाही के लिए नहीं पहुँचते, तब तक अदालत नहीं उठेगी।

कराची मेल शाम साढ़े पाँच बजे मुलतान स्टेशन पर पहुँची। न्यायाधीश के सेक्रेटरी ने पत्र द्वारा सूचना दी कि आपकी गवाही देने तक न्यायालय खुला रहेगा। स्वामी जी तुरन्त न्यायालय पहुँचना चाहते थे, परन्तु जनता ने उन्हें घोड़ागाड़ी में बिठाकर शहर में जुलूस निकाला और शाम के साढ़े सात बजे स्वामी जी न्यायालय पहुँच पाए। स्वामीजी की गवाही से सन्तुष्ट होकर न्यायाधीश ने आर्य प्रतिनिधि सभा के पक्ष में निर्णय दिया। (संस्मरण-पं. चन्द्रकेतु शर्मा)

कोई इस घटना का मूल्यांकन करे कि इतिहास में और किस गवाह के सम्मान में अदालत गवाह के आने का इन्तजार करती रही। उस मुस्लिम न्यायाधीश ने जो यश कमाया-वह भी सम्मान का पात्र है। आर्यो! इस घटना पर जितना गर्व किया जाए कम है।

२. रैटीगन को हराने वाले:- संत निहाल सिंह जी ने अपने संस्मरण में लिखा है कि १८९० ई. के आस-पास की बात है-मैं जब बच्चा ही था। रैटीगन नाम के एक बैरिस्टर का नाम पंजाब में इतना प्रसिद्ध था कि स्कूलों के बच्चे अक्सर कहते थे- ओहो! क्या कहने रैटीगन साहब के, तू कोई रैटीगन है। लाहौर की एक सड़क का नाम 'रतीगान रोड' उन्हीं के सम्मान में रखा गया।

मैं होशियारपुर में स्कूल में पढ़ता था। एक दिन पिता जी कचहरी से आए और बोले- तुम हमेशा लाहौर के वकील रैटीगन की बात करते हो और समझते हो कि मनुष्यों में वही सबसे बुद्धिमान् है। कल तुम्हें उस व्यक्ति

से मिलाऊँगा, जिसने खुली कचहरी में, सबके सामने रैटीगन को हरा दिया है।

मैं अगले दिन पिता जी के साथ कचहरी पहुँचा। पिता जी ने मुझे उनसे मिलवाया-लम्बा-चौड़ा, पूरा देव का देव। उन्होंने कचहरी की सारी बातें बताईं। मैंने तभी से उन्हें 'चाचा मुंशीराम' कहना प्रारम्भ किया। उन्होंने मुझसे कहा- मेरे बालक मित्र, मुझे इस व्यवसाय से घृणा है, मैंने इसे छोड़ने का निर्णय कर लिया है- तुम भी कभी वकील न बनना।

और बाद में उन्होंने वास्तव में वकालत के पेशे को छोड़ दिया। वे जो कहते थे-वही करते थे।

३. ईदगाह से स्वराज्य सन्देशः- सम्भवतः सन् १९२२-२३ की घटना है। स्वामी जी स्वराज्य-प्राप्ति हेतु प्रचार करने बर्मा गए। तब बर्मा (अब म्यांमार) भारत का ही अंग था। प्रचार-कार्य की समाप्ति पर स्वामी जी ने रंगून की ईदगाह से जनता को स्वराज्य-प्राप्ति का सन्देश दिया- लगभग २५००० की उपस्थिति थी। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी भी उनके साथ ही थे। इस तरह जामा-मस्जिद दिल्ली, अकाल तख्त अमृतसर के अलावा रंगून की ईदगाह से जनता को सम्बोधित करने का श्रेय भी स्वामी श्रद्धानन्द जी को प्राप्त है, यह आर्यों के लिए गर्व और प्रेरणा की बात है।

(पुस्तक-लौह-पुरुष स्वतन्त्रानन्द, लेखक- राजेन्द्र जिज्ञासु)

४. शुद्धि-यज्ञ में आहुति की होड़ः- स्वामी धर्मदेव वेद-वाचस्पति जी के अनुसार सन् १९२४ ई. का वार्षिकोत्सव था। स्वामी जी ने आगरा शुद्धि-आन्दोलन के लिए दान की अपील की। जनता में दान देने की होड़ लग गई। माताओं ने अपने हाथ के कंगन तथा अन्य आभूषण उतारकर दान करना आरम्भ कर दिया था। बाद में स्वामी जी को किसी कारणवश इस प्रवाह को रोकना पड़ा था।

बाद में, माताओं द्वारा आभूषण दान के ऐसे अनेक कीर्तिमान् आजाद हिन्द फौज के लिए (१९४३ ई.), भारत-चीन युद्ध (१९६२ ई.), भारत-पाकिस्तान (१९६५ व १९७१ ई.) कारगिल युद्ध (सन् १९९९ ई.) के दौरान भी स्थापित किए गए। पर सम्भवतः शुरुआत १९२४ ई. की घटना से ही हो-यह अनुसन्धान का विषय है।

५. गांधी जी की स्वामी जी के चरणों में सिर झुकाने की इच्छाः- गांधी जी ने २१ अक्टूबर १९१४ ई. को फीनिक्स आश्रम (दक्षिण अफ्रीका) से मुंशीराम जी को पत्र में लिखा-''प्रिय महात्मा जी, श्रीयुत् एण्ड्रयूज ने आपके नाम और काम का परिचय मुझे दिया है। आशा है, आप मुझे आपको 'महात्मा' लिखने के लिए क्षमा करेंगे।''

सन् १९१५ई. में गांधीजी भारत आ गए। तब उन्होंने पूना से महात्मा मुंशीराम जी को फीनिक्स आश्रम के बच्चों को गुरुकुल में आश्रय देने हेतु उपकार मानते हुए पत्र में लिखा-''महात्मा जी आपके चरणों में सिर झुकाने की मेरी उम्मीद है।''

उल्लेखनीय है कि मुंशीराम जी तो बहुत पहले से ही 'महात्मा मुंशीराम' के नाम से प्रसिद्ध थे इसीलिए गांधी जी ने उन्हें महात्मा ही कहा था। जिस व्यक्ति को दुनिया महात्मा कह रही है- उसके द्वारा श्रद्धानन्द जी को महात्मा कहना व चरणों में सिर झुकाने की इच्छा प्रकट करना- अपने आप में उल्लेखनीय है।

६. पाँच वर्ष में, सातवें से द्वितीय स्थान परः- सन् १९०७ ई. में 'हिन्दुस्तान' समाचार पत्र द्वारा भारत के प्रसिद्ध व्यक्तियों के बारे में राय पूछी गई थी, जिसमें महात्मा मुंशीराम जी को पूरे देश में सातवाँ स्थान प्राप्त हुआ था। फिर सन् १९१२ ई. में लाहौर से प्रकाशित होने वाले पत्र 'प्रकाश' ने पाठकों से प्रश्न किया था कि उनकी सम्मति में भारत के छः सर्वोत्कृष्ट महापुरुष कौन-कौन हैं। कुल १००५ व्यक्तियों ने सम्मति प्रकट की, जिसके आधार पर महात्मा मुंशीराम जी द्वितीय स्थान पर थे। क्रमवार विवरण इस प्रकार था-

प्रथम स्थान-	श्री गोपाल कृष्ण गोखले-	७६२ मत
द्वितीय स्थान-	श्री महात्मा मुंशीराम-	६०३ मत
तृतीय स्थान-	श्री लाला लाजपतराय-	५३३ मत
चतुर्थ स्थान-	लो. बाल गंगाधर तिलक-	४७५ मत
पंचम स्थान-	पं. मदन मोहन मालवीय-	४७५ मत
षष्ठ स्थान-	दादाभाई नौरोजी-	४३३ मत

(संस्मरण-श्रीमती दीप्ति)

महात्मा मुंशीराम जी अपने लोकसेवा, नेतृत्व क्षमता, स्पष्टवादिता, उदारता आदि गुणों के कारण भारतीयों के

हृदय-सम्राट बन गए थे।

७. जॉइन्ट मजिस्ट्रेट ने सपत्नीक आशीर्वाद लिया:- डॉ. ब्रह्मानन्द दीक्षित विद्यालंकार जी के शब्दों में- मि. हॉबर्ट सहारनपुर के जॉइन्ट मजिस्ट्रेट थे। सन् १९१५ में वो अपनी पत्नी के साथ गुरुकुल काँगड़ी स्वामी जी का आशीर्वाद लेने पधारे। उनके विवाह को ९ वर्ष हो चुके थे, सन्तान नहीं थी। स्वामी जी ने कहा-परमात्मा आपकी इच्छा पूर्ण करे।

२ वर्ष बाद सन् १९१७ में स्वामी जी के संन्यास ग्रहण करने वाले दिन की बात है। मि. हॉबर्ट पत्नी व पुत्र सहित आए हुए थे। मैं उनसे मिला। संन्यास ग्रहण के बाद स्वामी जी के चरणों में सर्वप्रथम प्रणाम करने वाले लुधियाना के श्री लब्भूराम आर्य थे, द्वितीय श्री हॉबर्ट के सुपुत्र तथा उसके बाद मैं।

(ये सभी प्रसंग-'स्वामी श्रद्धानन्द-एक विलक्षण व्यक्तित्व'-पुस्तक से उद्धरित किए गए हैं।)

लेखक व प्रचारक श्री सन्तराम जी बी.ए. लिखते हैं- ''उनकी आत्मा प्रगतिशील थी। हम उन्हें बुराइयों के विरुद्ध संघर्ष करके प्रतिक्षण ऊपर उठता पाते हैं। अन्त में वे इतने ऊँचे उठ गये कि उनको देखने के लिए सिर को पीछे की ओर झुकाना पड़ता था।''

स्वामी श्रद्धानन्द जी के इन कार्यों को याद रखना तथा गर्व सहित प्रचार-प्रसार करना कृतज्ञता है तथा उनको भुला देना कृतघ्नता है। कृतघ्नता से हानि महापुरुषों को नहीं पहुँचती, वे तो अपना कार्य समाप्त करके चल देते हैं। हानि उस सन्तति को होती है, जो उनके पीछे आती है और उनके गुणों को भुलाकर सही मार्ग से विचलित हो जाती है। आइए, हम कल्याण मार्ग के पथिक बनें।

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४

ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्

-डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री

दीपकेनैकेन कृपया ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।
राष्ट्ररक्षार्थं हि सततं सैनिका नः विगत निद्राः।
सज्जिताः सीमा प्रदेशे सर्वथा सन्नद्धमुद्राः।
देश-प्रेमरतस्तदर्थं वाचयस्व सदा प्रशस्तिम्।।
ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।। १।।

मूढ़ता-दीनता-जडता प्रतिदिनं वर्धते देशे,
ज्ञानहीननराश्च धूर्त्ताः निःसृताः खलु साधुवेशे।
ज्ञान-ज्योतिरुदेतु सततं नाशयतु तामिस्त्रशक्तिम्।।
ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।। २।।

राजनीतिरियं सखे! ननु वर्त्तते गणिकेव चेष्टा,
नैव विश्वासः सतामिह धारणेयं हृदि निविष्टा।
कण्टकाकीर्णेषु पथिषु प्रकटयसि किं स्वाऽनुरक्तिम्।।
ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।। ३।।

शोषिताश्च बुभुक्षिताश्च वस्त्रहीनजना अनेके।
पर्यटन्ति विभिन्न-पथिषु चेतनावन्तः स्वदेशे।
जडे पाषाणे परं त्वं प्रकटयसि किं वृथा भक्तिम्?।।
ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।। ४।।

भ्रष्टमाचरणं जनेषु वर्धते तदु महारोगः।
जाति-वर्ग-विशेषवादः जृम्भते ननु महाशोकः।
रोग-शोक-निवारणार्थं चिन्तयतु काञ्चिदपि युक्तिम्।।
ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।। ५।।

लोकतन्त्रमिदं विचित्रं नैव चिन्तयते दरिद्रान्।
राजनेतारस्तु सततं साधयन्ति सदा समृद्धान्।
सत्यनिष्ठा विरहितेभ्यो दापयिष्यति को विमुक्तिम्?।।
ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।। ६।।

मातरं पितरं गुरुं कः सेवते बहुप्रीतियुक्तः?
संस्कृतं वेदोपनिषदं कः पठति श्रद्धाऽभिभूतः?।
उत्तरं प्राप्तुं युयुङ्क्षे नाम्नि ते प्रथमाविभक्तिम्।।
ज्वालयतु रे! दीप-पंक्तिम्।। ७।।

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति नि:शुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था नि:शुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का नि:शुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा नि:शुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ नि:शुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में नि:शुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अत: आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३० अप्रैल २०१७ तक)

१. श्री गौरव शर्मा, गुड़गाँव २. श्री संजीव बंसल, चण्डीगढ़ ३. मै. जैनिथ एन्टरप्राइजेज, नई दिल्ली ४. सुश्री श्रुति चौधरी, इन्दौर ५. श्री श्रेयस्कर चौधरी, इन्दौर ६. मास्टर अर्णव अग्रवाल, इन्दौर ७. श्री रवि अग्रवाल, इन्दौर ८. श्री शिवकुमार चौधरी, इन्दौर ९. सुश्री श्रेयसी चौधरी, इन्दौर १०. श्रीमती सुषमा चौधरी, इन्दौर ११. श्रीमती ऋचा अग्रवाल, इन्दौर १२. मा. सुविज्ञ चौधरी, इन्दौर १३. सुश्री अनन्या अग्रवाल, इन्दौर १४. सुश्री प्रेरणा चौधरी, इन्दौर १५. श्रीमती कलावती देवी कुर्मी पाटीदार, जयपुर १६. श्रीमती कमला देवी व श्री बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर १७. श्री अनिल कुमार मानधना, किशनगढ़ १८. श्री नरेन्द्र आर्य व श्रीमती रंजना आर्या, बैंगलौर १९. डॉ. पी.एम. ठक्कर, अहमदाबाद २०. श्रीमती गायत्री देवी, सिकन्द्राबाद २१. श्री सूर्यप्रकाश आर्य, विदिशा २२. श्री शिव स्वामी, डूंगरगढ़ २३. श्री लालचन्द यादव व श्रीमती विमला यादव, श्रीगंगानगर २४. श्री अवनीश कपूर, दिल्ली २५. डॉ. धर्मपाल गोयल व श्रीमती निर्मला गोयल, गिदड़बाहा २६. श्री रवि अग्रवाल, इन्दौर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३० अप्रैल २०१७ तक)

१. श्रीमती वेदवती शर्मा, उदयपुर २. श्री ओमप्रकाश सोमानी, अजमेर ३. श्री सुरेशचन्द नवाल, अजमेर ४. श्री प्रकाशचन्द शर्मा व श्रीमती उषा शर्मा, अजमेर ५. श्री रिषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट ६. श्री शिवकुमार कुर्मी, जयपुर ७. श्रीमती कमला देवी व श्री बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ८. श्री सुशील आर्य, बुलन्दशहर ९. श्री राजेश कुमार, नई दिल्ली १०. श्री मदनलाल सोमानी, अजमेर ११. श्रीमती चम्पा देवी शर्मा, अजमेर १२. श्री पीयूषकान्त जैन, अजमेर १३. श्री नृसिंह सोनी, बीकानेर १४. श्री रेवतराम, बीकानेर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

शंङ्का - समाधान - २

- डॉ. वेदपाल

शङ्का-१. मन तो जड़ है, क्या इसका कोई प्रमाण या आधार आर्ष ग्रन्थों में है। शयन पूर्व के छः मन्त्र तो उसे चेतन बतलाते हैं। **-जयदेव अवस्थी, जोधपुर**

समाधान-१. दार्शनिक जगत् के विवेच्य विषयों में ईश्वर, जीव, प्रकृति ये तीन तथा इनका सम्बन्ध-विवेचन महत्त्वपूर्ण है। ईश्वर इस दृश्य-जगत् अर्थात् सृष्टि का स्रष्टा है। जीव कर्त्ता एवं भोक्ता है। ये दोनों (ईश्वर एवं जीव) चेतन हैं। ईश्वर के ईक्षण द्वारा सृष्टि-सृजन का मूल प्रकृति है, अर्थात् सृष्टि का मूल उपादान प्रकृति है। यह अचेतन/जड़ है। सृष्ट जगत् ही जीव का कर्म एवं भोग क्षेत्र है, किन्तु जीव कर्म एवं भोग में समर्थ तब होता है, जब वह शरीर धारण कर लेता है। यह दृश्य शरीर स्थूल है। जीव कभी स्थूल शरीर से सम्पृक्त रहता है और कभी नहीं । जीव के वाहक रूप में (एक शरीर से दूसरे शरीर अथवा एक योनि से दूसरी योनि को प्राप्त करने तथा दो शरीरों के मध्यवर्ती अन्तराल में) सूक्ष्म शरीर भी दर्शन के क्षेत्र में विवेचित है। इसे उभयेन्द्रिय (ज्ञानेन्द्रिय+कर्मेन्द्रिय) कहा गया है। साथ ही इसकी संज्ञा अन्तःकरण भी है। इसका उपादान जड़ प्रकृति है। उससे सृष्ट/उत्पन्न होने के कारण इसका जड़ होना स्वतः सिद्ध है। 'द्रष्टव्य-सांख्य दर्शन १.६१- ''सत्त्वरजस्........र्गणः।'' सत्यार्थ प्रकाश-समु. ८, पृ. १३८, वेदान्तसार पृ. २९।

सत्यार्थप्रकाश समु. ९, पृ. १५४- पर महर्षि दयानन्द का एतद्विषयक मन्तव्य निम्नवत् है-''**देह और अन्तःकरण जड़ हैं**, उनको शीतोष्णादि प्राप्ति और भोग नहीं है, जैसे पत्थर को शीत और उष्ण का भान वा भोग नहीं है। जो चेतन मनुष्यादि प्राणी उसको स्पर्श करता है उसी को शीत-उष्ण का भान और भोग होता है। वैसे प्राण भी जड़ हैं, न उनको भूख, न पिपासा, किन्तु प्राण वाले जीव को क्षुधा, तृषा लगती है। वैसे ही **मन भी जड़ है**, न उसको हर्ष, न शोक हो सकता है, किन्तु मन से हर्ष-शोक, दुःख-सुख का भोग जीव करता है।''

वैशेषिक के प्रसिद्ध भाष्यकार प्रशस्तपाद के अनुसार- मन अणु तथा प्रति शरीर में एक है। **यह चेतन नहीं है अर्थात् जड़ है।** यदि इसे चेतन मान लें, तो जो शरीर केवल आत्मा का भोगायतन है वह आत्मा और मन दोनों का ही भोगायतन होगा। आत्मा के समान मन भी शरीर का अधिष्ठाता होगा, किन्तु शरीर की प्रवृत्ति और निवृत्ति एक के ही अनुरोध से देखी जाती है। मन करण है। कोई भी करण स्वतन्त्र कर्त्ता के रूप में दिखाई नहीं देता। प्रत्येक करण किसी कर्त्ता के अधीन ही रहता है। अतः करण होने से मन भी परार्थ-दूसरों के उपभोग का साधन है। **अतः मन अचेतन/जड़ है।** (द्रष्टव्य-प्रशस्तपाद- ''मनस्त्वयोगान्मनः।.......साधारणविग्रहवत्त्वप्रसङ्गादज्ञत्वम्। करणभावात्परार्थम्।''-द्रव्ये मनः प्रकरणम् पृ. २१६-२२६ सम्पूर्णानन्द सं. वि.वि. संस्करण १९९७ ई.। तथा-''यदि ज्ञातृमनो भवेच्छरीरमिदं साधारणमुपभोगायतनं स्यात्। न चैवम् एकाभिप्रायानुरोधेन तस्य सर्वदा प्रवृत्तिनिवृत्तिदर्शनात् तस्मादज्ञं मनः'' - कन्दली।)

शरीर-इन्द्रिय-मन चेतन आत्मा के आधीन हैं। आत्मा की प्रेरणा से धारणादि क्रियाओं में इनकी प्रवृत्ति होती है। यदि ये (शरीर-इन्द्रिय-मन) चेतन होते तो स्वतन्त्र होते और जीवात्मा की प्रेरणा के बिना कार्य करते। इनके स्वतन्त्र होने पर इनके किए कर्मफल का भोक्ता आत्मा को नहीं माना जा सकता (जबकि भोक्ता आत्मा है), क्योंकि इससे अकृताभ्यागम (अन्य के किए का भोक्ता) दोष होगा। इनके अचेतन होने पर ये जीवात्मा के करण-साधन हैं और साधन से किए कर्म का फल कर्त्ता ही भोगता है। **अतः मन जड़/अचेतन है।** द्रष्टव्य-''यथोक्तहेतुत्वात् पारतन्त्र्यादकृताभ्यागमाच्च न मनसः'' न्याय द. ३.२.४०- इस पर वात्स्यायन भाष्य निम्नवत् है-

परतन्त्राणि भूतेन्द्रियमनांसि धारणप्रेरणव्यूहनक्रियासु।
प्रयत्नवशात् प्रवर्तन्ते, चैतन्ये पुनः स्वतन्त्राणि स्युः।।

जीवात्मा बुद्ध्यादि जड़ से भिन्न चेतनस्वरूप है। मन आदि जड़ अन्तःकरण में प्रतीयमान प्रकाश चेतन आत्मा का है, क्योंकि वह प्रकाशस्वरूप है, वही इन्हें प्रकाशित

करता है-

"जडव्यावृत्तो जडं प्रकाशयति चिद्रूपः"

- सां. द. ६.५०

शयनपूर्व के छः मन्त्रों यजु. ३४.१-६ में किस मन्त्र में किस पद द्वारा मन को चेतन कहा गया है? यह आपने नहीं लिखा है। यजुर्वेद के महर्षि दयानन्द तथा उव्वट-महीधरकृत किसी भी भाष्य में मन को चेतन नहीं कहा गया है।

अतः सांख्य, न्याय, वैशेषिक दर्शन, वात्स्यायन तथा प्रशस्तपाद सदृश भाष्यकार एवं श्रीधरकृत कन्दली के साथ ही वेदान्तसार एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्पष्टतः मन को जड़, अन्तःकरण एवं जड़ प्रकृति का कार्य (अहङ्कार से उत्पन्न) कहा गया है। स्पष्टतः **मन जड़ है।**

शङ्का-२. जैसे मुरा+अरि=मुरारि या मुरारी अर्थात् श्रीकृष्ण, वैसे ही दुःख+अरि=दुःखारि या दुखारी अर्थात् सुखी क्यों नहीं होता? 'कोई न हो दुखारी' का अर्थ 'कोई सुखी न हो।' कृपया भावना में न बहें-सही शब्दार्थ करें।

-जयदेव अवस्थी, जोधपुर

समाधान- प्रस्तुत शङ्का किसी कवि की रचना को लेकर है। कवि बहुधा इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग करते हैं, जो लोक में असंगत प्रतीत होते हैं। जैसे-"कालखण्ड के शिलालेख पर कौन लिखेगा स्वर्णाक्षर"। इसीलिए प्रसिद्धि है-निरंकुशाः कवयः। प्रकृत शङ्का, शास्त्र से असम्बद्ध है पुनरपि-मुरारि शब्द के सादृश्य पर दुखारी शब्द का अर्थ 'कोई सुखी न हो' करना उचित नहीं है, क्योंकि मुरारि (मुरारी नहीं) शब्द संस्कृत मूल का है, जबकि दुखारी शब्द का प्रथम प्रयोग 'दुःख से भरा हुआ/दुःख से परिपूर्ण' अर्थ में तुलसीकृत रामचरितमानस में अनेक स्थलों पर उपलब्ध है। जैसे-

सकल मलिन मन दीन दुखारी।
देखि सास आन अनु हारी।।

- अयोध्या काण्ड

वैसे भी दुखारी में दीर्घ ईकार है, ह्रस्व (दुखारि) नहीं। यह शङ्का एक भाषा के शब्द का दूसरी भाषा के किसी शब्द सादृश्य के आधार पर तत्सदृश अर्थ करने के कारण है। वास्तव में शङ्का निर्मूल है।

आचार्य धर्मवीर जी की स्मृति में स्थिर-निधि

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने परोपकारिणी सभा की स्थापना करते समय तीन उद्देश्य रखे थे-

१. वेद और वेदांगादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने-कराने, पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने, छापने-छपवाने आदि में, २. वेदोक्त-धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक-मण्डली नियत करके देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में ३. आर्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण, पोषण और सुशिक्षा में व्यय करें और करावें।

इन कार्यों को करने के लिये सभा का वर्तमान मासिक व्यय लगभग १२ लाख रुपये है, जो कि आर्यजनों के दान पर ही निर्भर है। परोपकारिणी सभा के कार्यकारिणी अधिवेशन सं. २२९ एवं साधारण अधिवेशन सं. १२० के प्रस्ताव १३ में आचार्य धर्मवीर जी द्वारा प्रारम्भ किये गये बृहत् प्रकल्पों (प्रकाशन, प्रचार, अध्यापन आदि) के लिये आचार्य धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रुपये की स्थिर-निधि बनाने का संकल्प लिया गया है। आर्यजनों से निवेदन है कि इस पुनीत कार्य में अपना अधिक से अधिक सहयोग प्रदान कर आचार्य जी को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करें।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

मन्त्री

आवश्यक-सूचना

परोपकारिणी सभा की रसीद-बुक (रसीद संख्या ४५५१ से ४६०० तक) ऋषि मेले के समय खो गई है, जिसमें संख्या ४५५१ से ४५८८ तक की रसीदें कटी हुई हैं। इन संख्याओं की रसीदें जिन भी महानुभावों के नाम से काटी गई हों वे कृपया अपनी रसीद की एक फोटो कॉपी सभा के पते पर अवश्य भेज देवें।

मन्त्री

स्वामी दयानन्द का यज्ञ विषयक दृष्टिकोण
(गृह्यसूत्रों के सन्दर्भ में)

-डॉ. उदयन आर्य

वेद दुनिया की प्राचीनतम पुस्तक है और उन वेदों को पढ़ने-पढ़ाने की श्रृंखला में वेदांगों का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। ये वेदांग हैं- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष।

कल्पसूत्रों के चार भाग हैं-श्रौत, गृह्य, धर्म और शुल्ब। प्रत्येक वेद के अपने-अपने गृह्यसूत्र हैं। गृह्य का तात्पर्य गृहस्थ आश्रम से है अर्थात् करणीय-अकरणीय कर्मों का वर्णन गृह्यसूत्रों में प्राप्त होता है। मेरे द्वारा ऋग्वेद के तीनों ही गृह्यसूत्रों (आश्वलायन, शांखायन तथा कौषीतकि) का विशेष अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ है कि पौराणिक जगत् में जितनी भी परम्परा यज्ञ के नाम पर प्रचलित हैं उनका कहीं-न-कहीं, किसी न किसी रूप में सन्दर्भ गृह्यसूत्रों में ही प्राप्त होता है। ऋषि दयानन्द द्वारा भी बहुत सारे यज्ञ के विधि-विधानों का सन्दर्भ भी गृह्यसूत्र ग्रन्थ ही हैं। अब प्रश्न यह है कि दोनों ही प्रकार की विधियों में कौन-सी विधि उपयुक्त या उचित मानी जाये? सायण, महीधर, उव्वट आदि भाष्यकारों ने भी वेदों के जिन मन्त्रों का अर्थ हिंसापरक अथवा अश्लीलता-युक्त किया है, वो कहीं-न-कहीं इन गृह्यसूत्रों की देन है। वस्तुत: स्वामी जी वेद को स्वत: प्रमाण मानते हैं तथा उनके सभी व्याख्या ग्रन्थों को परत: प्रमाण की श्रेणी में रखते हैं। यदि केवल मात्र गृह्यसूत्रों के विधि-विधान के आधार पर यजमान यज्ञ करना चाहे तो कदापि सम्पूर्ण यज्ञ नहीं कर सकता। किसी भी गृह्यसूत्रकार ने सम्पूर्ण यज्ञ से सम्बन्धित किसी भी विधि-विधान का पूर्णरूप से उल्लेख नहीं किया है। जैसे यज्ञ की सामग्री कितनी और क्या होनी चाहिए? यज्ञ के समय किन मन्त्रों का पाठ होना चाहिए? वेदज्ञ अथवा वेदपाठी की योग्यता किस प्रकार की होनी चाहिए? इत्यादि अन्य अनेकों प्रश्नों के समाधान का पूर्ण विवरण ऋग्वेदीय गृह्यसूत्रों में प्राप्त नहीं होता है। ऋषि दयानन्द पहले ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने उन-उन विधियों का ही उल्लेख एवं विधि-विधान दिया है जो वेद-सम्मत, विज्ञान-युक्त तथा प्राणिमात्र के हितकारक हैं। वस्तुत: गृह्यसूत्रों को पढ़ते समय यह विशेष अवधान देना चाहिए कि गृह्यसूत्रकार जिस-जिस विधि का वर्णन या उल्लेख करते हैं वह सब प्रामाणिक नहीं हैं, क्योंकि प्रत्येक विधि का गृह्यसूत्रकार समर्थन नहीं करते हैं। अपितु तत्कालीन परम्पराओं का भी उल्लेख करते हैं और इस प्रकार के ग्रन्थों को पढ़ने से यह ज्ञात हो जाता है कि प्राचीन काल में किन-किन परम्पराओं का समाज में प्रचलन था। इन्हीं परम्पराओं के कारण पौराणिक जगत् में इन्हीं विधियों का उल्लेख मिलता है। स्वामी जी ने गृह्यसूत्रों से विशिष्ट एवं अति-आवश्यक विधियों को लेकर सुन्दर, सरल एवं सुव्यवस्थित यज्ञ का स्वरूप प्रदान किया है। इसलिए हमारे सामने यह ऋषि दयानन्द द्वारा प्रणीत यज्ञ-परम्परा अतुलनीय एवं सारगर्भित है।

त्रय: पाकयज्ञा: हुता अग्नौहूयमाना अनग्नौ प्रहुता ब्राह्मभोजने ब्रह्मणि हुता:।।

- आ.गृ. १/१/२-३

इस प्रकरण से सुतरां स्पष्ट है कि अग्नि में आहुति करना तो यज्ञ है ही, बिना अग्नि के बलिवैश्व कर्म भी यज्ञ ही है तथा साथ में ब्राह्मणों को भोजन कराना भी यज्ञ ही कहा गया है। सायं-प्रात:कालीन होम, जिनमें केवल आहुति-दान होता है, उन्हें हुत कहा गया है। जिनमें हवि नहीं देते तथा बलि-कर्म भी नहीं करते आदि क्रियाओं को आहुत कहते हैं। वे पाकयज्ञ जिनमें आहुति दान के साथ बलि-कर्म भी होता है, उन्हें प्रहुत कहते हैं। जैसे :- यज्ञ, ब्राह्मण-भोजन आदि।

शास्त्रीय परम्परा में यज्ञों को दो विभागों में विभक्त किया गया है। श्रुति अर्थात् वेद में विहित श्रौत यज्ञ और स्मार्त यज्ञ अर्थात् गृह्यसूत्रों में वर्णित स्मार्तयज्ञ। साक्षात् वेद संहिताओं में यज्ञों के नाम तो यत्र-तत्र प्राप्त होते हैं, परन्तु कोई क्रमिक विभाग प्राप्त नहीं होता है। वस्तुत: कात्यायन

के "**मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्**" इस कथन के अनुसार मन्त्र संहिता और तद् व्याख्यानभूत ब्राह्मणों को वेद मानने के कारण ब्राह्मणग्रन्थों में विशदरूपेण वर्णित यज्ञों को श्रौत यज्ञ कहा गया है। ये पाँच हैं:- १. अग्निहोत्र २. दर्शपौर्णमास ३. चातुर्मास ४. निरूढ़पशुबन्ध ५. सोमयाग। स्मृति-विहित यज्ञों को स्मार्त कहा जाता है। वस्तुत: इन यज्ञों का मूल स्रोत गृह्यसूत्र हैं। विभिन्न स्मृतियों मनुस्मृति आदि में इन यज्ञों का वर्णन गृह्यसूत्रों की अपेक्षा अधिक लोक प्रचलित होने से इन यज्ञों को स्मार्त संज्ञा प्राप्त हुई।

आश्वलायन ने वेदाध्ययन को ब्रह्मयज्ञ कहा है, (आ.गृ. ३/१/३) परन्तु ऋषि दयानन्द प्रात: व सायंकाल ब्रह्मयज्ञ की विधि में सन्ध्योपासना का विधान करते हैं तथा यह प्रत्येक आर्य के लिए नित्य-कर्म कहकर उसकी आवश्यकता को बतलाते हैं। यहाँ स्वामी जी का अभिप्राय यह है कि प्रात:कालीन ब्रह्मयज्ञ में व्यक्ति द्वारा किए गए रात्रिकालीन पापाचरण का प्रायश्चित करते हुए रात्रिकालीन दिनचर्या का मूल्यांकन करना तथा सायंकालीन ब्रह्मयज्ञ का उद्देश्य दिवसीय पापाचरणों का प्रायश्चित तथा दिवसीय कार्यों का मूल्याकंन करना। आश्वलायन स्वाध्याय के अन्तर्गत ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण, कल्प, गाथा, नाराशंसी, इतिहास और पुराणों के ग्रन्थों का अध्ययन बतलाते हैं। (आ.गृ. ३/३/१) अर्थवाद के रूप में आश्वलायन कहते हैं कि जो ऋग्वेद का अध्ययन करता है, उसके पितरों के लिए दूध की नदियाँ स्वधाकार से साथ प्रवाहित होती हैं। (आ.गृ. ३/३/३) इत्यादि अन्य ग्रन्थों के अध्ययन का महत्त्व अर्थवाद के रूप में बतलाते हैं। वेदों का स्वाध्याय स्वयं करने से पितरगण कैसे तृप्त होंगे इसका कोई प्रयोजन या महत्त्व गृह्यसूत्रकार नहीं बतलाते हैं। साधारण रूप से सभी यह स्वीकार करते हैं कि जो जैसा प्रयत्न और पुरुषार्थ करेगा, उसका फल उसको ही मिलता है, परन्तु यहाँ पर विपरीत दिखाई दे रहा है कि ब्रह्मयज्ञ का फल पितरों की तृप्ति के लिए है। कहीं न कहीं इस प्रकार के विधि-विधानों का प्रयोजन या महत्त्व विद्वानों के लिए पुन: विचारणीय है। ब्रह्मयज्ञ के प्रकरण में शांखायन सन्ध्योपासना कर्म कहकर विधान करते हैं कि जंगल में जाकर समित्पाणि: होकर नित्य मौन धारण कर उत्तर की ओर मुख करके अन्वष्ट देश में नक्षत्रों के दर्शन से पूर्व में सन्ध्या करता है। कुछ रात्रि व्यतीत होने पर महाव्याहृतिपूर्वक सावित्री मन्त्र और स्वस्त्ययन का जप करके फिर सन्ध्या करता है, इसी प्रकार प्रात: प्राङ्मुख बैठता हुआ सम्पूर्ण सूर्य के दर्शन पर्यन्त सन्ध्या करनी चाहिए। सूर्यदेव के समुदित हो जाने पर स्वाध्याय करना चाहिए। ऋग्वेदीय गृह्यसूत्रकारों ने ब्रह्मयज्ञ के सन्दर्भ में कोई विशेष व्याख्या, विधि तथा किन मन्त्रों का पाठ करना चाहिए आदि कुछ भी विस्तृत विवरण नहीं दिया है। कहीं-न-कहीं इस यज्ञ की विधि में अपूर्णता प्रतीत होती है। अगर कोई व्यक्ति गृह्यसूत्रकारों के अनुसार ब्रह्मयज्ञ करना या कराना चाहे तो शायद यह कार्य सम्भव नहीं है। दु:खद तो यह भी है कि ब्रह्मयज्ञ का विशेष प्रयोजन भी नहीं दिया है। पौराणिक परम्परा में जो विज्ञान विरुद्ध बातें दिखाई देती हैं वे भी इन्हीं गृह्यसूत्रों की देन हैं यथा श्राद्ध, तर्पण आदि अन्य गृह्यकर्म वर्णित हैं।

शोध करते समय शोधार्थी को किसी भी मत के विषय में पूर्वाग्रह से ग्रसित नहीं होना चाहिए और मैंने भी इस परम्परा का पालन किया है। संक्षेप में, यही कहना चाहता हूँ कि जो अमूल्य व अति महत्त्वपूर्ण विधि-विधान, प्रयोजन, उपयोगिता, सुव्यवस्थित मन्त्रों का संग्रह ऋषि दयानन्द द्वारा प्रणीत संस्कार विधि आदि अन्य ग्रन्थों में प्राप्त होता है वैसा अन्यत्र प्राप्त नहीं है। विशेष महत्त्व इस बात का भी है कि स्वामी जी द्वारा प्रणीत विधि अतीव सरल है साथ ही साथ उसकी उपयोगिता भी स्वत: सिद्ध है।

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

नया झूँठ ही सच से डरता!
पुराना झूँठ तो सब से उलझता!!

-आर्य प्रहलाद गिरि
मुख्य पुजारी, निंगेश्वर मठ

अत्यन्त निर्भीक सत्यवादी ऋषि दयानन्द अपनी सुख्यात, खोजपूर्ण, तार्किक व ऐतिहासिक-धार्मिक-क्रान्तिकारी पुस्तक-'सत्यार्थ प्रकाश' में पहले ही कह चुके हैं कि भारत में जब से मूर्तिपूजन का टोटका (टोना, टोटरम) शुरु हुआ है, तभी से भारतवासी हम-आर्यों का चौमुखी पतन होने लग गया और यह तब तक होता ही रहेगा जब तक भारत या मूर्तिपूजा मिट नहीं जाते। अब हमें चुनना है कि भारत देश को बचायें या मूर्तिपूजा को।

देश बचा रहेगा तो मूर्तिपूजा का शौक, तमाशा पुन: हो सकेगा। किन्तु देश मिटा तो मूर्तिपूजा का फिर सवाल ही नहीं उठता। आखिर हम मूर्तिपूजा के पीछे इतने क्यों पड़ने लग गये हैं कि प्रतिदिन देश के करोड़ों रुपये और करोड़ों घंटे बर्बाद करने में जरा भी नहीं हिचकते?

चूँकि मूर्तिपूजा का यह टोटका शुरु-शुरु में बौद्धों की गिद्ध-दृष्टि से बच्चों (निराकारोपासक भोले-भाले जन सामान्य आर्यों) को बचाने हेतु ही रचा गया था। किन्तु कोई भी झूँठ जब बार-बार बोला जाता है, तब कुछ दिन बाद खुद बोलने वाला भी उस झूँठ को सत्य ही समझ बैठता है। जैसे-एक जालसाज व्यक्ति बेहद ग्रामीण इलाके में चला गया और अपने को सरकारी अधिकारी बता-बता कर गाँव वालों से सप्रेम टैक्स वसूलने लगा, कुछ वर्षों बाद एक सही प्राशासनिक अधिकारी उस गाँव को देखने-जाँचने आया, तो वह धूर्त उस अधिकारी का इस तरह विरोध करने लगा, मानों यही सच्चा अधिकारी हो।

ताज्जुब की बात कि सारे गाँव वाले भी यह कहते हुए इसी धूर्त का साथ देने लगे कि इन्हें मैं वर्षों से जानता हूँ। जबकि नवागन्तुक के पक्ष में कोई-कोई ही वृद्ध-शिक्षित जन अपनी सहमति दे रहे थे। अन्तत: अपने को अपमानित होता देख वह अधिकारी राजधानी में लौट आया और पुन: पुलिसजनों व अधिकारियों को लेकर उस गाँव में गया। तब भी उसी तरह अड़ा वह दुस्साहसी खुद को पुश्तैनी-शोषणाधिकारी ही बता रहा था। राजा ने उसे बन्दी बना लिया, तब भी वह न्याय की ही दुहाई दे रहा था।

विधर्मी लोग मूर्ति-पूजा से जितना नफरत करते हैं, हम लोग उतना ही अधिक छोटे-बड़े मन्दिरों-मूर्तियों को गली-गली में बना-बनाकर उन्हें और चिढ़ाने लगे हैं। जैसे किसी को गाली देने पर अपनी ही जुबान-शिष्टता गन्दी होती है या पड़ोसी को तंग करने हेतु अपने किवाड़ को पीटते रहने में अपना ही नुकसान है। उसी तरह मूर्तिपूजा के नव-कुप्रचलन से देश और धर्म का इतना अधिक नाश हो चुका है कि एक पुजारी होकर भी मुझे ही अब चिल्लाना भी पड़ रहा है।

जैसे भोजन में चटनी थोड़ा खाना ही हितकर होता है,त्यों ही मूर्तिपूजा या मूर्तिकला, चित्रकारिता का महत्त्व भी देश, धर्म व ईश्वर से अधिक न हो जाये, इसके लिये भी सदा अंकुश बनाये रखना ही चाहिये। वरना कोई कितना भी श्रेष्ठ धर्म हो, निरंकुश होने पर अपने मूल धर्मग्रन्थ (वेद) से काफी दूर होकर भ्रष्टतम हो ही जाता है।

मान्य पाठक! दो हजार वर्षीय मूर्तिपूजा-प्रथा के महाझूठ से अब भारत की सनातन वैदिक ऐतिहासिक सच्चाई लड़ेगी, तो आप साथ देंगे न?

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. १४ से २१ मई, २०१७ **आर्यवीर शिविर**, सम्पर्क- ०९४६००१६५९०

२. २८ मई से ०४ जून, २०१७ **आर्य वीराङ्गना शिविर**, सम्पर्क- ०८८२३९४५९५६

३. १८ से २५ जून, २०१७- **योग-साधना शिविर**, सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

संभाग स्तरीय आर्यवीर व आर्य वीरांगना शिविर

युवक व युवतियों के संस्कार निर्माण का सुनहरा अवसर

आर्यवीर दल जिला अजमेर का

जिला स्तरीय जूडो-कराटे, आसन-प्राणायाम, व्यायाम प्रशिक्षण एवं संस्कार शिविर

छात्रों हेतु दिनांक 14 मई से 21 मई 2017 तक तथा

छात्राओं हेतु दिनांक 28 मई से 04 जून 2017 तक

स्थान : ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

आयोजक

परोपकारिणी सभा, अजमेर एवं आर्यवीर दल, राजस्थान (अजमेर सम्भाग)

शिविर में प्रवेश हेतु आवश्यक नियम

* पंजीयन शुल्क 500/- रु. देना अनिवार्य है।
* शिविरार्थियों के आवास,भोजन की व्यवस्था, परोपकारिणी सभा द्वारा रहेगी।
* शिविरार्थी की आयु कम-से-कम 13 वर्ष से कॉलेज स्तर तक हो तथा वह पूर्ण रूप से स्वस्थ होना/होनी चाहिये।
* शिविरार्थी अपने साथ सफेद टी-शर्ट, नीला लोअर, सफेद पी.टी. शुज, सफेद मोजे, मौसम के अनुकूल पहनने के कपड़े, दो नए फोटो, पैन, टॉर्च, तेल व साबुन इत्यादि अनिवार्य रूप से लावें।
* प्रत्येक शिविरार्थी को शिविर की दिनचर्या व अनुशासन का पालन करना होगा। अनुशासनहीनता करने पर शिविर से पृथक् कर दिया जायेगा।

आवश्यक निवेदन एवं अपील

इस विशाल शिविर के प्रबन्धन, भोजन, आवास, विज्ञापन, मार्गव्यय, मानदेय आदि पर पर्याप्त व्यय होगा। अतः आप सभी दानी महानुभावों एवं आर्यसमाजों से निवेदन है कि अपनी सहायता राशि नकद/चैक/ड्राफ्ट आदि परोपकारिणी सभा, अजमेर-305001 के पते पर भेजने की कृपा करें।

विशेषः भामाशाह दानी महानुभाव एक दिन अथवा एक समय के भोजन का व्यय अथवा भोजन सामग्री देकर भी सहयोग कर सकते हैं।

सम्पर्क सूत्र

डॉ. विश्वास पारीक-09460016590, श्रीमती रीना चौधरी-08823945956,

श्री वासुदेव आर्य-9460112092, ऋषि उद्यान - फोन : 0145-2621270

सुख-दुःख का मूल-उत्पादक मनुष्य स्वयं

-प्रकाश चौधरी

प्राय: ऐसा देखने में आता है कि मनुष्य अपने क्षणिक सुख के लिए लोभवश, बिना विचारे, बिना परिणाम एवं प्रभावों का विचार किये कर्म किये चला जाता है। कई बार किसी दबाववश, तात्कालिक दण्ड, उपहास या हानि को टालने-वश झूँठ, छल-कपट, हिंसा, चोरी आदि का भी सहारा ले लेता है। ऐसा कर लेने के उपरान्त ईश्वर की ओर से उसे लज्जा, भय, शंका, अशान्ति, चिन्ता आदि की अनुभूति होने लगती है। उसे आभास होने लगता है कि मेरे अमुक दुष्ट कर्म का दण्ड ईश्वर की ओर से मिलेगा। वह नादान उस कर्मफल से बचने हेतु उपाय ढूँढने लगता है। दान, जप, स्नान करता है, पूजा करवाता है, तीर्थ पर जाता है, उपवास करता है और बड़े-बड़े पुजारी, स्वामी, बापू जैसे धर्माधिकारी उसे उपाय भी बताते हैं। ईश्वर को भोग लगवाते हैं। यज्ञ, दान, बलि चढ़ाना, पूजा, आराधना आदि अनेकों प्रकार के उपाय बताए जाते हैं। कुछ अज्ञानी एवं दुष्ट अपने को ज्ञानी बताते हुए तान्त्रिक-विद्या का प्रयोग करते हैं। दूसरों को, पड़ोसियों को कारण बताकर उपाय सुझाते हैं।

हमारी वैदिक संस्कृति और हमारा सिद्धान्त ऐसा नहीं कहता। उसके अनुसार ''**अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्**'', अर्थात् किये हुए शुभ कर्म या अशुभ कर्म का फल भोगना ही पड़ता है। तो फिर उपाय क्या है?

वैदिक सिद्धान्त के अनुसार, ऋषि मुनियों के गहन अध्ययन के अनुसार बुरे कर्मों से बचने हेतु स्वाध्याय, सत्संग, शंका-समाधान, चर्चा आदि के द्वारा प्रथम तो हमें यह जानना चाहिए कि अच्छे कर्म क्या हैं, कौन से हैं और बुरे कर्म कौन से हैं। कहा गया है कि ऐसे कर्म जो लज्जा अनुभव कराएँ, वे बुरे कर्म हैं और जिनसे प्रसन्नता का अनुभव हो और शान्ति की प्राप्ति हो, वे शुभ कर्म हैं। अच्छे व बुरे कर्म की पहचान ज्ञान करवाता है। विद्या ही अविद्या को दूर करने का उपाय है। ज्ञान के उपरान्त बुरे कर्मों को न करने का संकल्प लेना चाहिए। सतर्क रहकर उसके परिणामों, प्रभावों का विचार करते रहना चाहिए। मुख्यतया ईश्वर की नित्य स्तुति-प्रार्थना व उपासना करके प्रभु से साहस, बल, पराक्रम प्राप्त करके कर्मों के विषय में निर्णय लेना चाहिए। आज-कल तो ज्ञान, कर्म, उपासना आदि और अनेकों योग के कार्यक्रम टी.वी. पर दिखाए जाते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि कर्म और कर्मफल क्या है? कर्मों का फल कब और कैसा और कितना मिलता है? सब जानते हैं कि फल ईश्वर देता है। कुछ को तो यह भ्रान्ति है कि कर्म ईश्वर की प्रेरणा से ही किया जाता है, फिर फल क्यों? परन्तु ऐसा नहीं है। वैदिक सिद्धान्त के अनुसार जीव कर्म करने में मुक्त और फल पाने में परतन्त्र है। मनुस्मृति, योगदर्शन, गीता आदि अनेकों ग्रन्थों में कर्म और कर्मफल की अलग-अलग रूप से परिभाषाएँ दी गई हैं, पर सार सभी परिभाषाओं का एक ही है-सकाम कर्म और निष्काम कर्म। जीवात्मा अपनी इच्छा, ज्ञान तथा प्रयत्न से शरीर (साधन) द्वारा पाप और पुण्य के कार्य करता है, जो सकाम और निष्काम कर्म कहलाते हैं। सकाम कर्म उन कर्मों को कहते हैं, जो लौकिक फल अर्थात् धन, पुत्र, यश आदि की इच्छा से किये जाते हैं। दूसरे निष्काम कर्म मनुष्य के परम लक्ष्य 'मोक्ष प्राप्ति' हेतु किये जाते हैं। सकाम कर्मों को तीन भागों में बाँटा है-

१. **अच्छ कर्म**- सेवा, दान, परोपकार आदि

२. **बुरे कर्म**- झूँठ, चोरी, छल-कपट आदि

३. **मिश्रित कर्म**-खेती, उद्योग करना आदि

परन्तु निष्काम कर्म सदा अच्छे होंगे, इनका फल ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति के रूप में होता है, जीवित अवस्था में समाधि रूप में, मृत्यु उपरान्त मोक्ष रूप में। लेकिन सकाम कर्मफल इस जीवन में भी व मृत्यु उपरान्त भी भिन्न-भिन्न योनि, भोग और आयु के रूप में भोगा जाता है।

जो कर्म इस जन्म में फल देने वाले होते हैं, उनको ''दृष्टजन्म वेदनीय कर्म'' कहते हैं और जो अगले जन्म में फल देने वाले होते हैं उन्हें 'अदृष्टजन्म वेदनीय कर्म' कहते हैं। सकाम कर्मों के तीन प्रकार के फल हैं-जाति, आयु, भोग। जाति में तमाम योनियाँ पशु, पक्षी, मनुष्य

आदि और इन्हीं योनियों के अनुसार आयु-भोग प्राप्त होते हैं। इन तीन अवस्थाओं में जो सुख-दु:ख प्राप्त होता है वही वास्तव में कर्मों का फल है। दृष्टजन्म वेदनीय कर्म आयु व भोग का फल तो दे सकते हैं, लेकिन जाति का फल नहीं दे सकते। जैसे अच्छा आहार, विहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य, व्यायाम, योग आदि के सेवन से हम स्वस्थ, निरोगी आयु को बढ़ाने वाले हृष्ट-पुष्ट हो सकते हैं और विपरीत अवस्था में विपरीत फल के भोगी होंगे, परन्तु जो जाति हमें अब प्राप्त है उसको हम कभी नहीं बदल सकते, क्योंकि ये योनि पूर्वजन्म के कर्मफल के अनुसार प्राप्त हो चुकी है। इस जन्म का किया गया कर्म अगले जन्म में जातिफल के रूप में जब मिलेगा तो वह अदृष्टजन्म वेदनीय कहलाएगा। शास्त्रों में कर्मफल को कर्माशय कहा गया है। जीवन में कर्मों का फल मिलकर जाति-आयु-भोग प्रदान करते हैं, उनमें महत्वपूर्ण फल जाति है, उस पर आयु और भोग आधारित हैं। ये जाति भी अच्छे और निम्न स्तर की हो सकती है। कोई मूर्ख है, कोई विकलांग है, कोई सुन्दर है, कोई कुरूप है, बुद्धिमान् है आदि-आदि। कोई पशु-पक्षी की जाति प्राप्त करता है। इसी प्रकार आयु मनुष्य की १०० वर्ष, पशु २५ वर्ष, कीट-पतंग ४ से ६ मास, पक्षी २ से ४ वर्ष आदि-आदि। भोग भी जाति के अनुसार मिलता है। मनुष्य अपनी बुद्धि से सब सुखों के साधन जुटाता है, बाकि पशु-पक्षी अपनी-अपनी योनियों के अनुसार प्राप्त करते हैं। आयु व भोग घट-बढ़ सकते हैं पर सीमा के अन्दर।

सभी कर्मों के फल आवश्यक नहीं कि एक ही समय में मिल जाएं। कभी साथ मिलकर फल देते हैं, कभी दबे रहते हैं, लुप्त हो जाते हैं। लम्बे समय के उपरान्त जिन-जिन कर्मों की प्रधानता हो जाती है, उसके अनुसार फल रूप में जन्म मिलता है बाकि शेष कर्म संचित कर्मों में जुड़ते जाते हैं। जब तक उसी प्रकार के कर्मों की प्रधानता नहीं हो जाती, ये दबे हुए या संचित कर्म रूप में रहते हैं।

अन्त में सार निकलता है कि इस जन्म में दु:खों से बचने के लिए और सुख की वृद्धि के लिए हमें सदा शुभ कर्म ही करते रहना चाहिए और उनको भी निष्काम भावना से। ये कैसे हो? परमात्मा की स्तुति-प्रार्थना और उपासना करते हुए अपने अशुभ कर्मों की प्रवृत्तियों की मैल को धोया जाए। रात्रि को सोने से पूर्व अपना आत्मनिरीक्षण हो, जीवन को यज्ञ रूप मानते हुए उसमें शुभ कर्मों की समिधाएँ डालें, ताकि परोपकार से यश प्राप्त हो। उसकी सुगन्धि से जीवन सुगन्धित हो। प्रतिदिन के अभ्यास से मल छूट जाएगा। प्रभु से भय हो, प्रभु को साक्षी मानकर हम सत्य पर चलें। कहते हैं ५० प्रतिशत भी यदि शुभ कर्म अच्छे हों तो मानव जीवन मिलता है, शेष ५० प्रतिशत के लिए फिर से परीक्षा की तैयारी करनी होगी। शुभ कर्म करके १०० प्रतिशत अंक हम पावें और मोक्ष रूपी लक्ष्य को प्राप्त करें, ऐसी हम सब मिलकर कामना करें।

शरीर, मन, इन्द्रियों का स्वामी जीवात्मा है। जैसा मन से विचार करता है, वैसा वाणी से बोलता है, जैसा वाणी से बोलता है वैसे ही आचरण करता है, जैसा आचरण करता है उसी के अनुरूप सुख-दु:ख प्राप्त करता है, परिणाम, प्रभाव प्राप्त करता है, अर्थात् सुख-दु:ख का मूल उत्पादक वह स्वयं ही है।

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेष कर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें। **- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४**

जब तक सब की रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्षसुख से अधिक कोई सुख है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें। **- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३**

महर्षि के अनन्य भक्त एवं क्रान्तिगुरु– पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा

– डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी

युगद्रष्टा महर्षि दयानन्द वैदिक धर्म, वैदिक संस्कृति और उनकी साधनरूप संस्कृत भाषा के प्रति कितने सचेत थे एवं देश–विदेश में वे उसका किस प्रकार प्रचार चाहते थे, यह उनके द्वारा अपने युवा शिष्य पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा को इंग्लैण्ड में भेजे गए पत्रांशों से स्पष्ट होता है–

''तुम्हें वहाँ से (इंग्लैण्ड से) स्वदेश आने के पूर्व वहीं धन–धान्य से पूर्ण यूरोपीय देशों में वेद–ज्ञान से युक्त व्याख्यान देने चाहिएं।''

''तुम वहाँ पारलियामेंट नामक सज्जनों की सभा में जाकर और वेदादिशास्त्रानुकूल व्याख्यान देकर उन पारलियामेंट के सदस्यों को प्राचीन भारतीयों के सौजन्यादि गुणों के नियम से परिचित करो। जिससे वे शीघ्र ही दु:खित भारतीयों के दु:ख–दारिद्र्य को देखें कि किस प्रकार म्लेच्छ लोग म्लेच्छपने से भारतीय लोगों को पीड़ित कर रहे हैं।''

''.......(अपने) पठन–पाठन को पूरा करके, वेदार्थ के उच्च अभिप्रायों को प्रकाशित करने वाली अपनी वक्तृता को देकर ही आपको वहाँ से लौटना चाहिए......क्योंकि धन–लाभ से उत्तम कीर्ति की प्राप्ति उच्च एवं कल्याणकारी है।''

उक्त पत्रांशों से स्पष्ट है कि महर्षि अपने शिष्य से क्या–क्या आशाएँ और अपेक्षाएँ रखते थे। महर्षिवर्य ने वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार एवं वेद और वेदांगादि शास्त्रों के प्रकाशन और प्रचार के उद्देश्य से सन् १८८३ ई. में श्रीमती परोपकारिणी सभा की स्थापना की। यह महर्षि की उत्तराधिकारिणी सभा थी/है। इसमें पाँच अधिकारी तथा अठारह अन्य सभासद् थे। पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा इन सभासदों में से एक थे। उस समय उनकी वय छब्बीस वर्ष मात्र थी। इसी से ज्ञात होता है कि स्वामी जी महाराज उनकी योग्यता, प्रतिभा और निष्ठा पर कितना विश्वास करते थे। **कालान्तर में श्यामजी कृष्ण वर्मा श्रीमती परोपकारिणी सभा के उपमन्त्री तथा वैदिक यन्त्रालय के अधिष्ठाता भी रहे।**

४ अक्टूबर १८५७ को गुजरात के कच्छ राज्य के मांडवी कस्बे में श्रीकृष्ण जी भणसाली के यहाँ जन्मे श्यामजी कृष्ण वर्मा की प्रारम्भिक शिक्षा कच्छ में तथा पश्चात् मुंबई में हुई जहाँ उनके पिता छोटा–मोटा व्यवसाय कर जीवन–निर्वाह करते थे। वे प्रारम्भ में अंग्रेजी माध्यम के हाई स्कूल में पढ़ते थे और अत्यन्त मेधावी थे। कक्षा में उन्होंने सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया तो अपने वैश्य समुदाय में उनकी प्रतिष्ठा व्याप्त होने लगी। यहीं पर स्वामी दयानन्द के अनन्य भक्त सेठ मथुरादास लवजी ने उन्हें संस्कृत भाषा पढ़ने के लिए प्रेरणा दी। अत: श्यामजी प्रात: अंग्रेजी माध्यम के विद्यालय में और पश्चात् पंडित विश्वनाथ शास्त्री की संस्कृत पाठशाला में नियमित रूप से अध्ययन करने लगे। मुम्बई के ही अत्यन्त प्रतिष्ठित 'एलफिंस्टन हाई स्कूल' में अध्ययन करने के साथ–साथ वे संस्कृत भाषा और साहित्य के भी तलस्पर्शी अध्ययन में निमग्न हो गए। अपनी प्रतिभा और विद्वत्ता के कारण उनका परिचय मुंबई के ही सेठ छबीलदास लल्लूभाई के अत्यन्त प्रतिष्ठित परिवार से हुआ और कालान्तर में इसी परिवार की कन्या भानुमति के साथ सन् १८७५ ई. में उनका विवाह हो गया।

इस समय मुम्बई के सुधारवादी वैश्य वर्ग में महर्षि का प्रभाव बढ़ता जा रहा था और १८७५ में ही मुम्बई में महर्षि ने 'आर्यसमाज' की स्थापना की अनुमति प्रदान की थी। इन्हीं दिनों श्यामजी की भेंट महर्षि से हुई जिसके कारण उन्हें एक नवीन प्रेरणा एवं स्फूर्ति प्राप्त हुई। फलस्वरूप उनके संस्कृत–अध्ययन में एक नया आयाम जुड़ा और साथ ही संस्कृत–शास्त्रों में भी पटुता प्राप्त करने हेतु वे प्राणपण से जुट गए। महर्षि के शास्त्र–प्रतिपादित सुधारवादी विचारों से वे इतने प्रभावित हुए कि महर्षि के अनन्य शिष्य बन गए। हमें विचार करना चाहिए कि उन्होंने संस्कृत भाषा के मूल व्याकरण ग्रन्थ 'अष्टाध्यायी' पर जो अधिकार प्राप्त किया और जिस कारण उनकी ख्याति देश–विदेश में हुई उसके प्रेरक और अध्यापक महर्षि ही रहे होंगे, क्योंकि पौराणिक जगत् में सामान्यत: सिद्धान्त कौमुदी का अध्ययन ही वैयाकरण होने में पर्याप्त माना

जाता था।

संस्कृत भाषा और शास्त्रों के ज्ञान सम्बन्धी उनकी कीर्ति इतनी बढ़ी कि आर्यसमाज के प्रचार के लिए उन्हें विभिन्न स्थानों से निमन्त्रण प्राप्त होने लगे। संस्कृत-सम्भाषण और शास्त्र-मर्मज्ञता की विशेषता उन्हें निश्चय ही महर्षि से प्राप्त हुई अन्यथा इक्कीस वर्ष की वय में इतनी उपलब्धि प्राप्त करना अत्यन्त कठिन कार्य था।

'संस्कृत-अंग्रेजी शब्दकोष' नामक बृहद् कोश के रचयिता एवं ऑक्सफोर्ड में संस्कृत भाषा के प्राध्यापक मोनियर विलियम्स से उनकी भेंट इन्हीं दिनों मुंबई में हुई, जो श्यामजी के संस्कृत भाषा पर असाधारण अधिकार से अत्यन्त प्रभावित हुए। उनसे भेंट के पश्चात् श्यामजी की भी इच्छा हुई कि वे इंग्लैण्ड जाकर उच्च उपाधि प्राप्त करें। अत: कहीं से धन-सम्बन्धी सहायता प्राप्त न होने पर भी अपनी पत्नी से कुछ धनराशि उधार लेकर वे उच्च अध्ययन के लिए इंग्लैण्ड गए। विदेश में जाकर अध्ययन करने एवं वैदिक विचारों का प्रचार करने के लिए महर्षि ने स्वयं उन्हें एक पत्र में प्रेरित किया था।

पाँच वर्षों तक इंग्लैण्ड में रहकर अध्ययन और अध्यापन करते हुए श्यामजी 'ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय' के पहले भारतीय ग्रेजुएट बने और तत्पश्चात् उन्होंने बैरिस्टरी की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। एक संस्कृतज्ञ के रूप में उनकी इतनी ख्याति थी कि प्रो. मोनियर विलियम्स ने उनको दिए अपने प्रशंसा-पत्र में लिखा-''इस समय यूरोपीय संस्कृतज्ञों में ऐसा कोई नहीं है, जो श्यामजी तुल्य पाणिनीय व्याकरण का ज्ञाता हो तथा भारत में भी ऐसा कोई पण्डित नहीं है जो संस्कृत में अपूर्व योग्यता रखने के साथ लैटिन तथा ग्रीक का उच्चकोटि का ज्ञाता हो।''

प्रो. मैक्समूलर तथा ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. बी. जोवेट ने भी महर्षि के इस शिष्य की स्तुति करते हुए उन्हें प्रशंसा-प्रमाणपत्र दिए।

श्यामजी कृष्ण वर्मा जनवरी १८८४ को भारत आए तो यहाँ की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे थे। १८८५ में 'अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की ए.ओ.ह्यूम द्वारा स्थापना एक बड़ी घटना थी। अंग्रेज सरकार अपने प्रति बढ़ते असन्तोष को दबाने के लिए नित नये कानून बनाकर अत्याचारों के नये प्रतिमान गढ़ने में लगी हुई थी- शिक्षा, समाज, इतिहास, संस्कृति तथा अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को सरकार अपने ढंग से एक शस्त्र के रूप में प्रयुक्त कर रही थी।

श्यामजी जब भारत लौटे तो विदेशों में अर्जित अपने ज्ञान का सदुपयोग करने की दृष्टि से उन्होंने रजवाड़ों का सेवा-क्षेत्र चुना। ऐसा करने में उन्हें सम्भवत: यह लगा हो कि उनके गुरु स्वामी दयानन्द ने राजाओं को मार्गदर्शन देकर वैदिक धर्म के प्रचार-पूर्वक सुधारों को प्रारम्भ करने का प्रयत्न किया था। अस्तु, श्यामजी ने दीवान के रूप में रतलाम, उदयपुर-मेवाड़, एवं जूनागढ़ राज्य को अपनी सेवाएँ दीं। कुछ दिनों तक अजमेर में रहकर उन्होंने वकालत की, अजमेर नगरपालिका के सदस्य तथा वरिष्ठ उपाध्यक्ष भी रहे। अजमेर के निकटवर्ती स्थानों में उन्होंने सूत-कताई के तीन कारखाने भी स्थापित किए। इसके साथ वे वैदिक यंत्रालय के अधिष्ठाता भी रहे। श्रीमती परोपकारिणी सभा के माननीय सभासद् वे थे ही।

रजवाड़ों में चल रहे अंग्रेज अधिकारियों के कुटिल-तन्त्र के कई दुष्परिणाम उन्हें अपने सेवाकाल में भुगतने पड़े, जिसके कारण स्वातन्त्र्यचेत्ता यह महर्षि -शिष्य अन्तत: यह विचार करता हुआ कि भारत की स्वायत्तता एवं स्वतन्त्रता पर उन्मुक्त रूप से विचार प्रकट करने के लिए भारत-भूमि उपयुक्त नहीं है, १८९७ में वे इंग्लैण्ड को प्रस्थान कर गए। वहाँ रहकर उन्होंने भारत की स्वतन्त्रता के लिए खुलकर विचार प्रकट किए जो भारत में रहकर संभव न था। प्रख्यात पाश्चात्य दार्शनिक हर्बर्ट स्पेन्सर से वे उनके मानवतावादी विचारों के कारण अत्यन्त प्रभावित थे। अत: उन्होंने भारतीय छात्रों को इंग्लैण्ड में रहकर अध्ययन करने के लिए उनके नाम पर छात्रवृत्ति घोषित की, दूसरी छात्रवृत्ति उन्होंने अपने गुरु स्वामी दयानन्द की स्मृति में घोषित की। इन छात्रवृत्तियों के साथ यह अनिवार्य शर्त थी कि ये छात्रवृत्तियाँ पाने वाले छात्र अपने अध्ययन की समाप्ति के पश्चात् ब्रिटिश सरकार की नौकरी या सेवा स्वीकार नहीं करेंगे और न ही ब्रिटिश सरकार से कोई अन्य लाभ प्राप्त करेंगे।

श्यामजी अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की नरमपंथी नीतियों से प्रसन्न नहीं थे, वे इसमें लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की विचारधारा के प्रशंसक थे, जो अपेक्षाकृत तीक्ष्ण

स्वभाव के माने जाते थे। भारतीय स्वतन्त्रता को समर्थन देने के उद्देश्य से उन्होंने जनवरी १९०५ में 'इण्डियन सोशियोलॉजिस्ट' नामक अंग्रेजी मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इस पत्र में मुख्यत: इंग्लैण्ड की सत्ता एवं जनता को यह बताया जाता था कि भारतवासी अंग्रेजी शासन में रहते हुए क्या सोचते और अनुभव करते हैं। कहना न होगा कि यह पत्र बहुत लोकप्रिय हुआ और भारतीय स्वतन्त्रता-आन्दोलन के विषय में ब्रिटेन में एक सार्थक जनमत भी तैयार होने लगा। इसके साथ ही उन्होंने इंग्लैण्ड में रह रहे भारतीय मित्रों, शुभचिन्तकों एवं साथियों को लेकर १८ फरवरी १९०५ को 'इण्डियन होमरूल सोसायटी' की स्थापना भी कर दी। इसका उद्देश्य था 'भारत की स्वराज्य की प्राप्ति कराना तथा इसके लिए इंग्लैण्ड में समुचित प्रचार करना एवं भारत की स्वतन्त्रता तथा राष्ट्रीयता के भावों का प्रचार।'

छात्रवृत्ति लेकर इंग्लैण्ड में अध्ययनार्थ पहुँचने वाले विद्यार्थियों को सुविधा प्रदान करने की दृष्टि से श्यामजी ने 'इण्डिया हाउस' नामक एक छात्रावास भी स्थापित किया। कालान्तर में यह भारत की स्वतन्त्रता के सैनिक छात्रों के निवास का प्रमुख गढ़ बन गया। इस छात्रावास में नियम था कि कोई भी छात्र यहाँ मदिरापान नहीं कर सकेगा। श्यामजी ने प्रसिद्ध आयरिश और भारत-मित्र श्री एडमण्ड बर्क तथा पुणे के प्रसिद्ध विद्वान् श्री गणेश वासुदेव जोशी की स्मृति में भी छात्रवृत्तियाँ प्रारम्भ कीं। उनके मित्र श्री सरदार सिंह राणा ने भी महाराणा प्रताप और छत्रपति शिवाजी के नाम से छात्रवृत्तियाँ स्थापित कीं। इन्हीं छात्रवृत्तियों को पाने वाले विद्यार्थियों में विनायक दामोदर सावरकर नामक एक बाईस वर्षीय विद्यार्थी भी था जो बम्बई विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर इंग्लैण्ड में कानून की पढ़ाई करने पहुँचा । श्यामजी को इस युवक के सम्बन्ध में तिलक ने अत्यन्त प्रशंसात्मक पत्र भेजा था जिसमें सावरकर की राष्ट्रवादी भावनाओं एवं अंग्रेजी राज्य के प्रति उसकी भावनाओं का परिचय था। तिलक ने स्वयं अपनी ओर से सावरकर को सहायतार्थ चार सौ रुपये इंग्लैण्ड जाने के लिए दिए थे। लन्दन में वे श्याम जी के ऊर्जस्वी शिष्य बने और इस प्रकार महर्षि दयानन्द उनके दादा-गुरु प्रसिद्ध हुए।

श्यामजी कृष्ण वर्मा भारत की स्वतन्त्रता के लिए लंदन में रहते हुए भी प्राणपण से प्रयत्न करते हुए जनमत तैयार करने में तो लगे ही, स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्न करने वालों को वे आर्थिक सहायता भी देते थे। इसी उद्देश्य से उन्होंने १९०७ में भारत में राजनैतिक प्रचारार्थ प्रचारक वर्ग के संगठन के लिए दस हजार रुपए का अनुदान देने की घोषणा की।

इंग्लैण्ड भले ही विचार-स्वातन्त्र्य को प्रश्रय देने वाले राष्ट्र के रूप में प्रसिद्ध होने का ढोंग करता रहा हो, परन्तु जब श्यामजी का आन्दोलन वहाँ वैचारिक धरातल पर दृढ़ता प्राप्त करने लगा तथा उनके द्वारा प्रदत्त छात्रवृत्तियाँ अपना प्रभाव दिखाने लगीं तो अंग्रेजों को श्यामजी का इंग्लैण्ड में रहना असह्य होने लगा। इसी बीच १९०७ में प्रथम भारतीय स्वातन्त्र्य-समर के सम्बन्ध में, छात्रवृत्ति-प्राप्त सावरकर ने इस समर की प्रथम स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर ग्रन्थ-लेखन हेतु सामग्री संकलित कर ली। यद्यपि उन्हें वहाँ रहते हुए मात्र एक वर्ष ही हुआ था। इस संकलित सामग्री के आधार पर ही यह प्रथम गदर के स्थान पर स्वतन्त्रता-संग्राम सिद्ध किया जा सका। अंग्रेज सरकार इन सब घटनाओं पर पैनी नजर रख रही थी। अत: स्थितियाँ ऐसी बनीं कि श्यामजी को इंग्लैण्ड छोड़कर फ्रांस की राजधानी पेरिस को गमन करना पड़ा। फ्रांस में रहकर भी वे अपने 'इंडियन सोशियोलॉजिस्ट' का प्रकाशन करते हुए भारत की स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्न करते रहे। विदेशों में रह रहे भारतीय क्रान्तिकारी नेताओं से उनका सम्पर्क निरन्तर रहा तथा वे उन्हें सहयोग करते रहे।

वहीं पर दिनांक ३१ मई, १९३० को सायं ६ बजे उनका देहान्त हो गया।

मृत्यु से पूर्व यद्यपि उनके पास पर्याप्त धनराशि थी। विभिन्न छात्रवृत्तियाँ वे प्रदान करते थे तथा विश्व के बड़े-बड़े लेखकों एवं राजनेताओं से उनका पत्राचार होता था, परन्तु वे निराश हो गए थे क्योंकि उनके अनेक मित्र और सहयोगी उन पर यह आरोप लगाते थे कि वे क्रान्ति के अपने मार्ग से भटक गए हैं जबकि वे ऐसा नहीं मानते थे और अक्सर ऐसे आरोपों के उत्तर नहीं दिया करते थे।

कुछ भी हो, श्यामजी कृष्ण वर्मा ने महर्षि दयानन्द से जो सीखा, उसके अनुसार आचरण करने का प्रयत्न किया।

वे संस्कृत भाषा (विशेषतः) अष्टाध्यायी के विद्वान् होने के साथ-साथ वैदिक-लौकिक साहित्य में भी अच्छी गति रखते थे। अनेक स्थानों पर धाराप्रवाह संस्कृत-भाषण कर उन्होंने ख्याति अर्जित की थी, लैटिन-ग्रीक भाषाओं के वे ज्ञाता थे। इससे पृथक् वकालत एवं प्रशासनिक कार्यों का उनका अनुभव अत्यन्त परिपक्व था।

पाश्चात्य दर्शन एवं राजनीतिक सिद्धान्तों के वे मर्मज्ञ थे। स्वतन्त्रता उनका मूलमन्त्र था और इसके लिए उन्होंने जीवन भर कठिन परिश्रम किया। मानव-मात्र की स्वतन्त्रता के वे प्रबल पक्षधर थे। इसी कारण भारत से अन्यत्र जहाँ कहीं किसी देश की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष होता, वे उसका समर्थन करते थे। अंग्रेजों की क्रूरता के वे साक्षात् द्रष्टा एवं भोक्ता थे, अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध उनकी लेखनी सदैव आग उगलती रही। अनेक क्रान्तिकारियों के वे संरक्षक और प्रेरक रहे-लाला हरदयाल और वीर सावरकर इत्यादि उन्हीं की छात्रवृत्तियाँ पाकर विदेशों में अध्ययनार्थ गए। जिस प्रकार महर्षि दयानन्द ने सशस्त्र क्रान्ति का सन्देश न देकर भी, अंग्रेजों की विचार-स्वातन्त्र्य-नीति का अनुसरण करते हुए किंवा लाभ उठाते हुए जनमानस में स्वतन्त्रता के भाव भरने का कार्य किया उसी प्रकार श्यामजी कृष्ण वर्मा ने भी इंग्लैण्ड की धरती से वाक्-स्वतन्त्रता का लाभ उठाते हुए अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह का शंखनाद किया। हाँ, अनेकत्र वे सशस्त्र क्रान्ति की भी पक्षधरता करते दृष्टिगोचर होते हैं। उनकी यह भी विशेषता रही कि उन्होंने जीवन भर कोई अनैतिक कार्य नहीं किया, अन्यथा विदेशों में सुदीर्घ काल तक निवास करने वाले बहुधा दुर्व्यसनों में रत होते देखे गए हैं, यह महर्षि दयानन्द की प्रेरणा एवं वैदिक विचारों का प्रभाव ही था।

इस छोटे-से लेख में स्वराज्य के स्वप्नद्रष्टा एवं महान् क्रान्तिनायक का सामान्य परिचय ही दिया जा सकता है, उनके विस्तृत विचारों एवं कर्तृत्व के सम्यक् मूल्यांकन के लिए बृहद् अध्ययन एवं लेखन की आवश्यकता है।

आगे पं. पद्मसिंह शर्मा द्वारा लिखा गया उनका एक संस्मरण दिया जा रहा है, जिससे उनके पांडित्य पर सम्यक् प्रकाश पड़ता है-

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा का अद्भुत पाण्डित्य

-पं. पद्म सिंह शर्मा

बात उस समय की है जब पं. भीमसेन शर्मा (आगरा वाले) वैदिक यन्त्रालय, अजमेर में ग्रन्थों का संशोधन करते थे। दैवयोग से सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी देशभक्त पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा उन दिनों अजमेर आये हुए थे। पं. वर्मा स्वामी दयानन्द के प्रधान शिष्य थे। स्वामी जी से अष्टाध्यायी और महाभाष्य पढ़कर ही वे ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत-प्रोफैसर के पद पर गये थे। जिन दिनों की यह बात है, वे विलायत में ही रहते थे। भारत में कभी-कभी अपना कारोबार देखने आ जाते थे। तब वे राजनीति में नहीं उतरे थे और न ब्रिटिश शासन की ही उन पर वक्र दृष्टि थी। 'परोपकारिणी सभा' और 'वैदिक यन्त्रालय' के ट्रस्टियों में थे, इसलिए अक्सर यन्त्रालय का निरीक्षण करने चले आते थे।

पं. भीमसेन जी ने श्यामजी की सुन्दर संस्कृत-सम्भाषण के लिए विशेषरूप से कीर्ति सुन रखी थी। वर्मा जी जब प्रेस देखते-भालते पण्डित जी के पास पहुँचे तो पं. भीमसेन जी से उनका परिचय कराया गया। इस पर पं. भीमसेन शर्मा ने बातचीत संस्कृत में ही आरम्भ कर दी, यह देखने के लिए कि वर्माजी का संस्कृत पर कैसा अधिकार है। पं. भीमसेन जी को अपने साधिकार संस्कृत-भाषण पर गर्व था जो उचित ही था। पं. श्यामजी को संस्कृत छोड़े मुद्दत हो गई थी। विलायत में रहते थे, संस्कृत से सम्पर्क नहीं रहा था, पर वे तो छुपे रुस्तम निकले। पण्डितजी उनकी असाधारण संस्कृत-भाषण पटुता सुनकर विस्मय-विमुग्ध हो गये।

श्यामजी समझ गये कि संस्कृत बोलने के बहाने यह मेरे संस्कृत-ज्ञान की पण्डिताऊ ढंग से परीक्षा लेना चाहते हैं, अतः शर्माजी से बोले- आप मेरी अष्टाध्यायी में परीक्षा लीजिये। मुझे इतने दिन संस्कृत छोड़े हुए हो गये हैं, फिर भी भूला नहीं हूँ। यह कहकर आपने वही अपनी अष्टाध्यायी की प्रति मँगाई, जो स्वामी दयानन्द से अध्ययन करते समय पढ़ी थी। पुस्तक को पण्डित जी के हाथों में देकर बोले-जहाँ से इच्छा हो वहाँ से पूछ लीजिए। पण्डित जी ने बहुत-से प्रश्न किये, जिनका यथार्थ उत्तर मिला। जो सूत्र जहाँ से पूछा, उसका विस्तृत और सन्तोषप्रद उत्तर मिला। यहाँ तक कि अध्याय, पाद और सूत्र की सख्या तक बतला दी। उनकी इस अद्भुत स्मरण-शक्ति को देखकर पं. भीमसेन जी चकित रह गये। स्वामी दयानन्द के साक्षात् शिष्य में ऐसा अपूर्व वैदुष्य होना स्वाभाविक ही था।

संस्था - समाचार

प्रात:कालीन यज्ञोपरान्त समसामयिक चर्चा के अन्तर्गत 'वर्तमान परिस्थितियों में क्रान्ति की आवश्यकता है या नहीं'- इस विषय पर चर्चा हुई। **स्वामी मुक्तानन्द जी** ने कहा कि अंग्रेजी शासनकाल की तुलना में स्वतन्त्रता मिलने के बाद देश की स्थिति अनेक क्षेत्रों में बहुत बिगड़ गई है। जैसे- स्वतन्त्रता से पहले क्षेत्रीय भाषाओं का अधिक चलन था, आज अंग्रेजी भाषा का प्रचलन पूरे देश में हो गया है। भाषा की दृष्टि से हम आज भी पराधीन हैं। शराब, धूम्रपान, मांसाहार का प्रचलन अंग्रेजी शासन काल की तुलना में कई गुना बढ़ गया है। उस समय हमारा देश अश्लीलता से मुक्त था, आज मातृ शक्ति के प्रति दुर्व्यवहार से प्रधानमन्त्री भी शर्मिन्दा होते हैं। गोरे अंग्रेज धन-सम्पत्ति लूटकर अपने देश में ले जाते थे। आज के नेता देश का धन लूटकर गुप्त स्थानों में काला धन जमा करते हैं। उस समय देश में क्रान्ति की जितनी आवश्यकता थी, उससे अधिक आज है। महर्षि के शिष्यों ने उस समय क्रान्ति की थी, आज क्यों न करें? इस विषय पर अपने विचार प्रकट करते हुए **आचार्य सत्यजित् जी** ने कहा कि क्रान्ति के लिए शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक बल के साथ सुदृढ़ संगठन की भी आवश्यकता होती है। वर्तमान में हमारा संगठन दुर्बल होता जा रहा है। क्रान्ति की बातें करना सरल है, किन्तु उसका प्रारम्भ करना और निरन्तर उसे चलाये रखना कठिन है। जनता के समर्थन के बिना क्रान्ति नहीं हो सकती। क्रान्ति के लिए जोश और होश दोनों की आवश्यकता है। शारीरिक बल की अपेक्षा बुद्धि से कार्य करके ही हम अपनी बात दूर-दूर के लोगों तक पहुँचा सकते हैं। समस्याओं के समाधान के लिए क्रान्ति की अपेक्षा लोगों को अध्यात्म से जोड़ना ज्यादा लाभदायक है।

आप्त पुरुषों के गुणों का वर्णन करते हुए आपने कहा कि बहुत उच्च श्रेष्ठ गुणवाले व्यक्ति के लिए आप्त शब्द का प्रयोग किया जाता है। आप्त उनको कहते हैं जो बुद्धिमान्, ईमानदार, परिश्रमी, कृतज्ञ, यथायोग्य व्यवहार करने वाले, वेदों के विद्वान्, सत्य-असत्य का विभाग करनेवाले विवेकशील, आध्यात्मिक, धार्मिक, सहनशील, विश्वसनीय, योगी, साधक, ब्राह्मण, ऋषि, ईश्वरभक्त और देशभक्त होते हैं। अधर्म, अन्याय का नाश करने और धर्म की रक्षा के लिए युद्ध करने वाले क्षत्रिय भी आप्त होते हैं। जो अपने और सबके हित के लिये पवित्र कर्म करने वाले हों, वे आप्त होते हैं। आप्त पुरुष अपने ज्ञान व अनुभव से सबको लाभान्वित करते हैं। जिस राज्य में आप्त पुरुष होते हैं, वहाँ अकाल, मृत्यु और भय का वातावरण नहीं होता है। वहाँ अपूज्यों की पूजा और पूज्यों का तिरस्कार नहीं होता है।

प्रात:कालीन प्रवचन में **आचार्य सोमदेव जी** ने कहा कि वेद में ऋषियों की योग्यता को बताया गया है। ऋत को धारण करने और बढ़ाने वाले, असत्य को छोड़ने वाले ऋषि होते हैं। वे अहिंसक और सत्य के प्रति आग्रही होते हैं। वे आत्मा, परमात्मा और प्रकृति के यथार्थ स्वरूप को जाननेवाले होते हैं इसलिए अनित्य सांसारिक भौतिक पदार्थों का उपयोग करते हुए भी उनके आकर्षण में बँधते नहीं हैं। उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य ईश्वर होता है। परमपिता परमात्मा ऋत है, सत्य है, नित्य है, शाश्वत है। उनके नियम भी शाश्वत हैं, कभी बदलते नहीं हैं, स्थायी होते हैं। ईमानदारी और कर्त्तव्यनिष्ठा को भी ऋत कहते हैं। ऋषि और देवगण ऋत की ओर आकर्षित होते हैं। मन्दमति दुर्बल मनुष्य अनृत की ओर आकर्षित होता है।

आगे आपने बताया कि परमात्मा हमें वेद के द्वारा अपनी कमजोरियों को दूर करने का उपदेश करता है। महापुरुष अपने उपदेशों, प्रवचनों से हमारी कमजोरियों को दूर करते हैं।

आचार्य कर्मवीर जी ने कहा कि परमेश्वर का उपदेश हम मनुष्यों को दो प्रकार से मिलता है- श्रुत काव्य अर्थात् वेद को पढ़-सुनकर और दृश्य काव्य इस अद्भुत संसार की घटनाओं को देखकर। हमारा शरीर, ज्ञान-कर्म इन्द्रियाँ यज्ञ अर्थात् परोपकार के साधन हैं। अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शरीर और इन्द्रियों का हमेशा

सदुपयोग करना चाहिये। ज्ञान-प्राप्ति में आँख तथा कान मुख्य साधन हैं। हम आँखों से भद्र देखें व कानों से भद्र ही सुनें। विचार सात्विक हैं तो घटनाओं से शिक्षा प्राप्त होती है। यदि विचार बुरे हैं तो मन में कुसंस्कार बनते हैं। हमारे **सब कार्य ईश्वर की** आज्ञा के अनुकूल हों।

कुरुक्षेत्र से पधारे **डॉ. रामचन्द्र जी** ने बताया कि महर्षि यास्क कृत निरुक्त में वेद-व्याख्या के तीन कालखण्ड की चर्चा है। सृष्टि के प्रारम्भ में साक्षात्कृतधर्मा ऋषि लोग हुए, जो वेदों के अर्थ जानते थे। उनके पश्चात् उपदेश के द्वारा लोगों को वेद के अर्थों का ज्ञान हुआ। तीसरी पीढ़ी में मनुष्यों को वेदों का अर्थ बताने के लिए वेदांगों की रचना की गई। महर्षि यास्क की अवधि को बहुत समय हो चुका है। वेद-ज्ञान कहीं तिरोहित हो गया था, लुप्त हो गया था। आज हम वेद का अर्थ जानने में समर्थ हैं, उसका एकमात्र श्रेय महर्षि दयानन्द जी को है। वेदों को समझने के लिए आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना आवश्यक है। आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना ऐसे है जैसे एक गोता लगाना और मोती मिलना। अनार्ष ग्रन्थों का पढ़ना, पहाड़ खोदने और कौड़ी मिलने जैसा है। महर्षि ने शताब्दियों के अज्ञान अन्धकार को दूर करके संसार को वेद और ईश्वर के सच्चे स्वरूप का ज्ञान कराया। उन्होंने न केवल धार्मिक क्षेत्र में, अपितु समाज-सुधार, शिक्षा, राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए भी बहुत कार्य किया। ओंकार जप को ईश्वर-साक्षात्कार का सर्वोत्तम उपाय बताया। आलस्य, प्रमाद छोड़कर मुक्ति पाने के लिए नित्य कर्म अर्थात् पञ्च महायज्ञों का उपदेश दिया। शरीर को धनुष, आत्मा को बाण और परमात्मा को लक्ष्य बनायें तभी जीवन सफल होगा।

शनिवारीय सायंकालीन सत्र में **आर्य मुनि जी** ने भजन एवं प्रवचन के माध्यम से आत्मा, परमात्मा, सूक्ष्म शरीर, मन, मन के दोष, मुक्ति के साधन, ईश्वर-साक्षात्कार आदि विषयों पर अपने विचार प्रस्तुत किये। **ब्र. विशाल जी** एवं **माता शान्ता जी** ने भजन सुनाये। रविवारीय प्रात:कालीन सत्संग में **ब्र. प्रशान्त जी** एवं **श्री लक्ष्मण मुनि जी** ने भजन सुनाया।

रविवारीय सायंकालीन प्रवचन में **ब्रह्मचारी राजेश जी** ने कहा कि वर्तमान युग में अधिकांश शारीरिक रोगों पर विजय प्राप्त हो चुकी है। फिर भी मनुष्य बाल्यावस्था, युवावस्था या वृद्धावस्था, किसी न किसी अवस्था में रोगी हो जाता है। इस युग में एक नया रोग उत्पन्न हो गया है। यह है पैसे का रोग, जिसके मूल में भोग की इच्छा होती है। अधिक धन कमाने के लिए अपहरण, हत्या, चोरी, रिश्वत, भ्रष्टाचार, खाद्य-पदार्थों में मिलावट, धोखाधड़ी आदि हो रहे हैं। धन से शारीरिक सुख मिलता है, आत्मिक सुख नहीं। इसका परिणाम बेचैनी, अवसाद, पागलपन आदि है।

ब्र. लोकेश जी ने कहा कि संसार का प्रत्येक मनुष्य सुख, शांति, आनन्द की प्राप्ति के लिए अहर्निश प्रयत्नशील होकर आगे बढ़ता रहता है। लक्ष्य के अनुकूल समय-समय पर चिन्तन, मनन, निदिध्यासन करके अपने गुण-दोष, वर्तमान स्थिति को जानना चाहिए। अहंकार छोड़कर दूसरे के गुणों को धारण करना और दोषों की उपेक्षा करनी चाहिये। हम जैसे विचार करेंगे वैसे ही बोलेंगे और वैसे ही बन जायेंगे। **ब्र. प्रशांत जी** ने कहा कि हमारे देश में मद्य, मांसाहार, भ्रष्टाचार, आतंकवाद, जनसंख्या-वृद्धि, गौहत्या आदि समस्याएँ बहुत अधिक बढ़ गई हैं। धर्म और ईश्वर-भक्ति से सम्बन्धित क्रिया-कलाप देशभक्ति के बिना व्यर्थ है। आध्यात्मिकता और भौतिकता का समन्वय करके राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान करने के लिए हम सबको मिलकर काम करना होगा। क्रान्ति की आवश्कता पहले भी थी, आज भी है। ऋषियों का ऋण चुकाना है तो क्रान्ति करनी ही होगी।

अतिथि- पिछले पन्द्रह दिनों में विद्वानों-संन्यासियों से मिलने, यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, भ्रमण तथा प्रचार हेतु बदायूँ, जयपुर, झज्जर, फतेहपुर, सवाई माधोपुर, ज्वालापुर, हरिद्वार, नागौर, अम्बाला कैन्ट से कुल १३ अतिथि ऋषि उद्यान आये।

विवाह वर्षगाँठ - ऋषि-उद्यान की यज्ञशाला में विशेष यज्ञ द्वारा १८ अप्रैल को श्री रमेश मुनि एवं श्रीमती उषा जी की तथा २३ अप्रैल को जयपुर निवासी श्री विनय एवं श्रीमती सुनीता झा की विवाह वर्षगाँठ मनाई गई। इस अवसर पर संन्यासियों, विद्वानों ने दोनों यजमान परिवारों को अपने-अपने आशीर्वाद प्रदान किये।

* **आचार्य सोमदेव जी का प्रचार कार्यक्रमः-**

सम्पन्न कार्यक्रमः-

(क) ६-७ मई २०१७:मढाणा आर्यसमाज मंदिर, नारनौल

आगामी कार्यक्रमः-

(क) १९-२० मई २०१७: उमाही कलां, सहारनपुर में आर्यसमाज सम्मेलन।

(ख) २५-३१ मई २०१७: मलारना चौड़, जि. सवाई माधोपुर।

(ग) १७-१८ जून २०१७: कनीना, हरियाणा।

संकलनकर्त्ता- लेखराम आर्य

आर्यजगत् के समाचार

१. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज मन्दिर, चौक आर्यसमाज, पटियाला, पंजाब द्वारा दि. ४ से ९ अप्रैल २०१७ तक हर्षोल्लास के साथ वार्षिकोत्सव मनाया गया। इस शुभ अवसर पर वैदिक प्रवक्ता स्वामी विदेह योगी मुख्य प्रवक्ता के रूप में और चण्डीगढ़ से भजनोपदेशक पं. उपेन्द्र आर्य विशेष रूप से आमन्त्रित थे। ४ अप्रैल को प्रातः यजुर्वेद पारायण महायज्ञ प्रारम्भ हुआ, जिसकी पूर्णाहुति दि. ९ अप्रैल को सम्पन्न हुई।

२. वेद-प्रचार- दयानन्द मठ दीनानगर में हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी स्वामी सर्वानन्द जी महाराज के ११७वें जन्मोत्सव पर १ से १२ अप्रैल २०१७ तक वेद-प्रचार यात्रा और १३ अप्रैल को आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया गया।

३. स्थापना दिवस मनाया- नव सम्वत्सर २०७४ और १४२वाँ आर्यसमाज स्थापना दिवस नगर आर्यसमाज, महर्षि दयानन्द मार्ग बीकानेर, राज. द्वारा अपनी गंगाशहर शाखा पर धूमधाम से मनाया गया। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि डॉ. सत्यप्रकाश आचार्य एवं नगर निगम के महापौर श्री नारायण चोपड़ा थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता उदयशंकर व्यास ने की।

४. शिविर- गुरु विरजानन्द गुरुकुल महाविद्यालय, करतारपुर द्वारा पंजाब प्रान्तीय आर्यवीर दल शिविर (केवल छात्र) दि. ४ से ११ जून २०१७ तक स्थान दोआबा कॉलेज, जालन्धर में आयोजित किया जायेगा। शिविर में आयु सीमा १२ से ४० वर्ष तक है। सम्पर्क- ९८०३०४३२७१

५. वार्षिकोत्सव मनाया- आर्यसमाज हरजेन्द्र नगर, कानपुर का ४८वाँ वार्षिकोत्सव दि. १४ से १६ अप्रैल २०१७ को तथा शोभा यात्रा (नगर कीर्तन) सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर ऋषि लंगर का भी आयोजन किया गया।

चुनाव समाचार

६. आर्यसमाज सादूलगंज, नकुड़, सहारनपुर, उ.प्र. के चुनाव में **प्रधान-** श्री चौ. गजेन्द्रसिंह, **मन्त्री-** श्री वैभव आर्य, **कोषाध्यक्ष-** श्री पंकज कुमार को चुना गया।

७. आर्यसमाज सरदारपुरा, जोधपुर, राज. के चुनाव में **प्रधान-** श्री एल.पी. वर्मा, **मन्त्री-** श्री मदनलाल गहलोत, **कोषाध्यक्ष-** श्री लक्ष्मणसिंह आर्य को चुना गया।

८. महिला आर्यसमाज सरदारपुरा, जोधपुर, राज. के चुनाव में **प्रधाना-** श्रीमती प्रमोद कुमार गुप्ता, **मन्त्राणी-** श्रीमती शारदा आर्य, **कोषाध्यक्ष-** श्रीमती संयुक्ता गुप्ता को चुना गया।

पाठकों की प्रतिक्रिया

आदरणीय सोमेश पाठक जी, सादर नमस्ते।

आप द्वारा रचित कविताएँ पढ़ीं। 'परोपकारी' मार्च प्रथम-२०१७ को लेता हूँ तो पृष्ठ ३ और ४० की कविताएँ एक-दो बार अवश्य पढ़ लेता हूँ। कविताओं से ऐसा लगता था कि ५० से ऊपर के होंगे। आपके युवापन में भी प्रौढ़ता झलकती है। हर पंक्ति में कुछ न कुछ है, जो मन को खींच लेता है। मेरी सोच भी कभी यह सोच नहीं सकती थी कि जीने की सच्चाई क्या है? आपकी कविता के संकेत ने सोचने पर लाचार कर दिया है, दूसरी बात मौत को तो हम मौत ही समझते थे। उसकी नज़दीकी आपकी कविता से मालूम पड़ी कि मौत, मौत नहीं, मुक्ति और जिन्दगी है, जीवन की शुरुआत है।

आगे बात ही बात में क्या रहस्य छुपा है, स्पष्ट हो गया। यह भी समझ सकते हैं कि आचार्य धर्मवीर, वीरों के वीर हैं, कोई ऐसी काया उनकी प्रतीक्षा में है, जिसमें प्रवेश पाकर वो और भी कल्याण के पथिक होंगे।

सोमेश पाठक जी प्रतीक्षा रहेगी अन्य रचनाओं की और हम भी पाठक बने रहेंगे। प्रतीक्षा में बधाई और शुभकामनाएँ। **- सोनालाल नेमधारी, मॉरिशस**

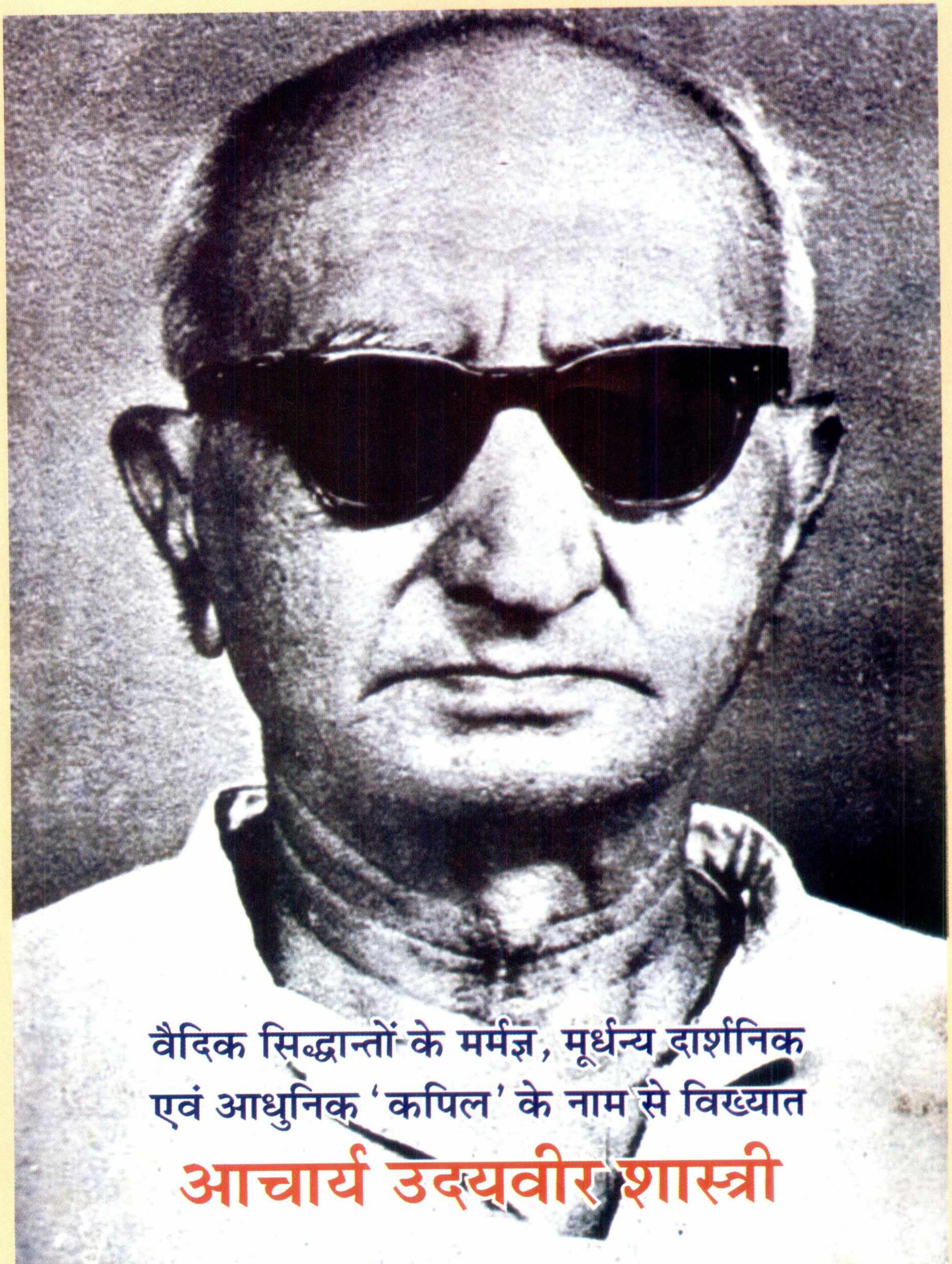
वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ, मूर्धन्य दार्शनिक
एवं आधुनिक 'कपिल' के नाम से विख्यात
आचार्य उदयवीर शास्त्री

आर जे/ए जे/80/2015-2017 तक प्रेषण : १५ मई, २०१७ आर.एन.आई. ३९५९/५९

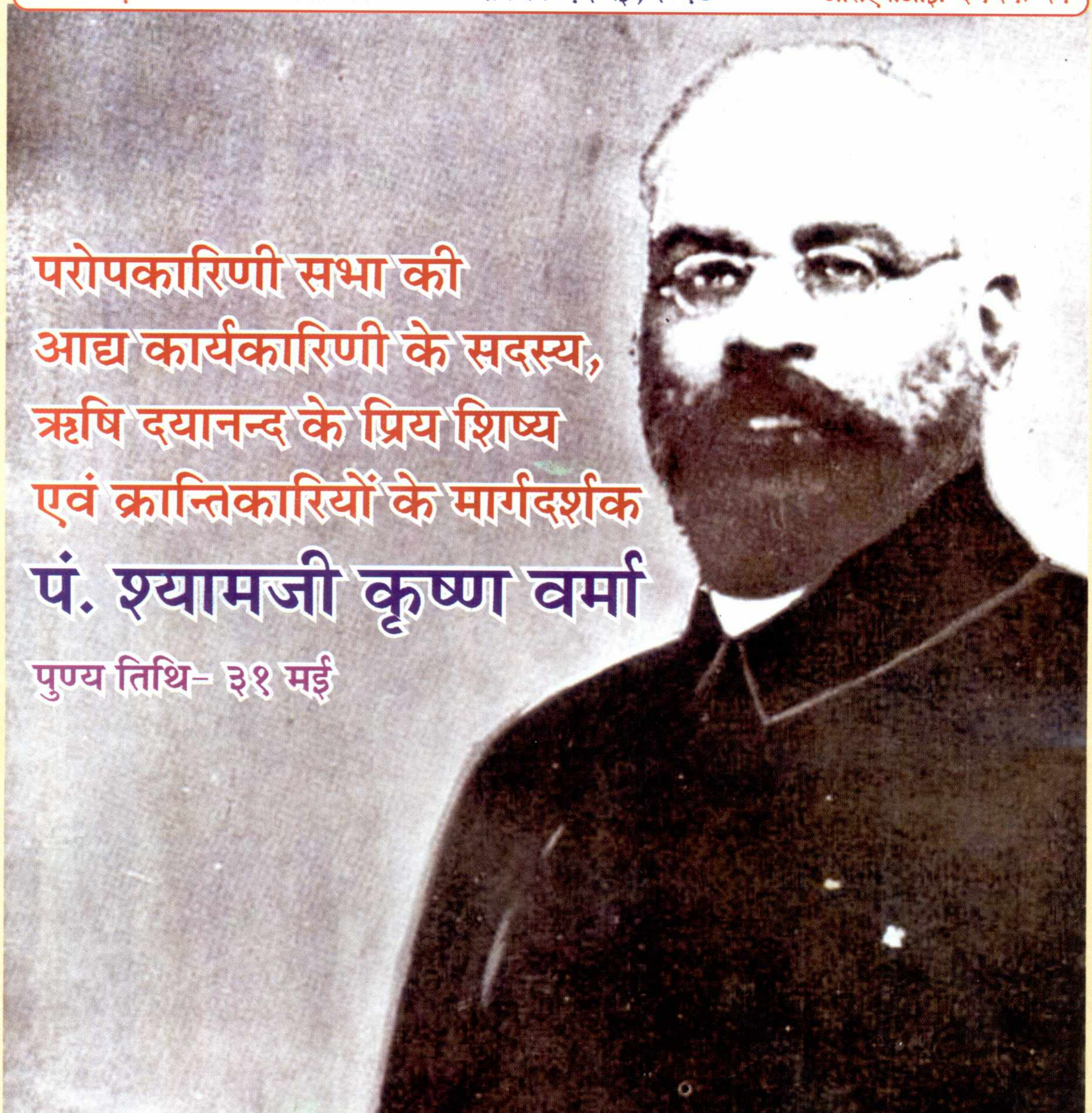

परोपकारिणी सभा की आद्य कार्यकारिणी के सदस्य, ऋषि दयानन्द के प्रिय शिष्य एवं क्रान्तिकारियों के मार्गदर्शक

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा

पुण्य तिथि- ३१ मई

सम्बन्धित विवरण- पृष्ठ संख्या ३६

प्रेषकः
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१